चन्दामामा
अगस्त १९८९
3
RS

रामानंद सागर कृत
रामायण
चित्र-कथा
१२ विभागों में । हिंदी और अंग्रेज़ी में ।
प्रति विभाग का मूल्य ५ रुपये
रामायण
चन्दामामा
विजया कम्बाइन्स
१८८, एन्.एस्.के. मार्ग, वडपलनी,
मद्रास ६०० ०२६ द्वारा प्रकाशित
अनुमति प्राप्त
सागर एन्टरप्राइजस्
नटराज स्टुडिओज, १९४ अंधेरी कुर्ला रोड, मुंबई-४०० ०६९.
ग्रंथ-क्रमांक १ अब समाचारपत्र-विक्रेताओं के पास उपलब्ध

PARRY'S PAGE

प्यारे बच्चो,

हर माह हम (मेरे सहायक कैरामिल्क, कॉफी बाइट, ट्राई मी, लॉलीपाप और मैं) तुम्हारे लिए कुछ खास विषयों वाली एक पूरी मज़ेदार पुस्तिका ही पेश किया करेंगे, जैसे कि इस बार हम तुम्हें चिड़ियाघर की सैर पर ले चल रहे हैं. इससे तुम्हें कई आश्चर्यजनक बातें पता चलेंगी. हंसी मजाक का छुटपुट मसाला मिलेगा और जानवरों के बारे में ढेर सारी जानकारी बढ़ेगी. अगर तुम इन पन्नों को काट कर जमा करते जाओगे तो थोड़े दिन में तो तुम्हारे पास अपना ही छोटासा एनसाइक्लोपीडिया तैयार हो जाएगा.

Parry's THE KING OF SWEETS

सिपाही कबू

एक कबूतर को एक पदक देकर
सम्मानित किया गया था कि
महायुद्ध के दौरान जब फ्रांस में
बरस रहे थे, यह कबूतर
के बीच भी संदेश लाने ले जाने
काम बखूबी निभाता रहा था.
अद्भुत वीरता की यह मिसाल

चिड़िया घर की सैर

चतुर चिंपाजी.

लंदन के चिड़ियाघर में आने वाले दर्शक वहां के चिंपाजियों की मजेदार हरकतें देखने के बाद अक्सर उनकी ओर सिक्के उछाल दिया करते हैं. इनमें एक चिंपाजी ऐसा चतुर भी था जो इन पैसों को जमा करके चिड़ियाघर के कैफेटेरिया में चला जाता और चाकलेट खरीद कर मजे से खाया करता था.

सभी जानवर पानी पीते हैं.?

पानी की जरूरत तो सभी जानवरों को पड़ती है लेकिन कुछ जानवर कभी पानी नहीं पीते. कुछ किस्म की छिपकलियां अपनी त्वचा के जरिए पानी सोख लेती हैं. रेगिस्तानी मूस यानी बड़े चूहे ओस भीगे या नमीवाले पौधे खाकर पानी की जरूरत पूरी कर लेते हैं. तो ये हैं वे तरकीबें जिनसे जानवर बिना पानी पिए भी जीते रहते हैं.

LOLLIPOP
कीटों-पशु-पक्षियोंकी शरीर रचना.
क्या तुम्हें मालूम है कि उन छोटी छोटी चीटियों के, जिन्हें हम मुश्किल से देख पाते हैं, ५ नाकें होती हैं?
और बेचारे सांप... वे अपनी आंखें कभी बंद नहीं कर सकते. उनकी पलकें जो नहीं होती.
लंबी गरदन वाला जिराफ तो देखा होगा तुमने. वह कभी खांस नहीं पाता लेकिन उसके गले में खराश अक्सर पैदा हो जाती है. अब जरा सोचो, उतने लंबे गले में खराश? बाप रे बाप!
क्या तुम जानते हो कि हाथी के एक दांत का वजन होता है करीब ९ पौंड — देखा, कितना भरा पूरा मामला है?
सच या झूठ?
ऊंट, पानी अपनी कूब में जमा कर लेते हैं.
कूब कोई पानी का घड़ा तो है नहीं. वह तो चर्बी का बना होता है. यह चर्बी ऊंट को तब ताकत देती रहती है जब उसे दाना पानी नहीं मिल पाता. इसीलिए ऊंट तीन चार महीने बिना पानी रह जाता है.
पालतू जुराब अगर तुमने कोई पशु पक्षी नहीं पाला है तो भी कोई बात नहीं. पेश है पालतू जुराब कठपुतली.
इस कठपुतली को बनाना बड़ा आसान है.
एक पुरानी जुराब ले लो. इसके अंदर हाथ डालकर उंगलियां इसके बिलकुल अगले सिरे तक ले जाओ और अंगूठा एड़ी की जगह.
मुंह बनाने के लिए दोनों के बीच एक सोल लगा दो. किसी पुराने कपड़े या फेल्ट को कानों जैसा काट कर चिपका दो.
ऐसे ही आंखें और दांत भी बना डालो. आंखों की जगह, चाहो तो बटन या मोती जैसी कोई चीज भी लगा सकते हो. बस बन गयी एक ऐसी पालतू चीज जो सारी जिंदगी तुम्हारे साथ रह सकती है.
अंगूठा
एड़ी
CARAMILK
भूख लगी क्या?
पालतू भालू.
Parry's
THE KING OF SWEETS
HTA 72

चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल-कथा "जयशील का निर्णय" सुप्रसिद्ध लेखक व कथाकार श्री. मनोजदास द्वारा विरचित है ।

धर्मशास्त्र सदा सत्यवचन की घोषणा करते हैं । परंतु सत्य और असत्य का मूल्य उनके परिणामों के आधार पर निश्चित करना पड़ता है । "विभूतिमिश्र की मानवता" इसी सत्य को बताती है ।

अमरवाणी

उदये सविता रक्तो रक्तश्चास्तमने तथा,
संपत्तौ च विपत्तौ च महतानामेकरूपता ।।

[उदय व अस्त के समय भी सूर्यगोल लाल रंग का होता है । इसी प्रकार संपत्ति व विपत्ति के समय महान लोग समान रूप से शान्तिपूर्वक व्यवहार करते हैं ।]

वर्ष : ४१ अगस्त १९८९ अंक : १२

एक प्रति : ३-०० :: वार्षिक चन्दा : ३६-००

जादूनगरी
आओ चलें
खिलते रंग
कितने सपने, कितनी कल्पनायें तुम्हारे मन में
उभरती होंगी... हैं न? कॅमल रंगों की
इन्हें बेरोकटोक उड़ने दो.
कॅमल के रंग पास में हों तो सपने अपने
रंग-बिरंगे रूप लेने लगते हैं
और कल्पना की फुलवारी खिलती चली
फिर कॅमल के पास रंग भी तो इतने सारे हैं
तुम्हारे हर सपने को उसका रंग मिल
बस कॅमल रंग उठाओ और रंगों की
खो जाओ.
कॅमल
२५ वर्षों से हर रंग में आपके संग.
Camel

कॅमलिन लिमिटेड
आर्ट मॅटेरियल डिविज़न
बंबई-४०० ०५९.
Vision-CL-4
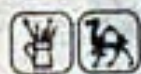
साधु और किसान

एक छोटे से गावँ में एक साधु आ पहुँचा और गाँव के समीप स्थित तालाब के पास एक बरगद के नीचे हिरन-चर्म बिछाकर बैठ गया । ग्राम-निवासी उसके आगे फल व मिठाई आदि समर्पित करने लगे ।

साधु ने उन लोगों से कहा, "तुम लोग सूर्यास्त के तीन-चार घड़ी पूर्व यहाँ आ जाओ । उस वक्त मैं तुम लोगों को भक्ति और वैराग्य के सम्बन्ध में बहुत-कुछ समझाऊँगा ।"

मगर बारिश की शुरूआत की वजह से किसान लोग खेती-बाड़ी के काम में लगे रहे । इसलिये सूर्यास्त के पहले केवल एक ही व्यक्ति उसके पास आया । वह उस गाँव का एक साधारण किसान था ।

उसको देख हताश स्वर में साधु ने कहा, "मैं इस गाँव के निवासियों को अनेक बातें समझाना चाहता था । लेकिन केवल तुम अकेले ही आ पाये । क्या मैं अपना प्रवचन शुरू कर दूँ?"

इसपर किसान ने उत्तर दिया, "स्वामीजी, मैं बहुत सारी पुआल लेकर मवेशीखाने में पहुँच जाता हूँ, तो वहाँ भले एक ही गाय क्यों न हो, उसको मैं चारा डाल ही देता हूँ ।"

यह सुनकर साधु संतुष्ट हुआ और लगभग दो घण्टों तक भक्ति तथा वैराग्य के बारे में उसने अपना प्रवचन सुनाया ।

प्रवचन समाप्त होने पर साधु ने किसान से पूछा, "बताओ, मेरा प्रवचन कैसा रहा?"

किसान ने विनयपूर्वक उत्तर दिया, "स्वामी, मैं मवेशीखाने में बहुत सा घास लेकर जाता हूँ, तो वहाँ स्थित एक ही गाय को सारा घास खिलाने का प्रयत्न नहीं करता ।" यह कहकर किसान वहाँ से चला गया ।

विभूतिमिश्र की मानवता

किसी ज़माने में चंपक देश पर राजा विभूतिमिश्र शासन करता था। लोगों का कहना था कि यह राजा सत्यवचन में राजा हरिश्चन्द्र की समता रखता है। यह बात देवलोक में पहुँची।

देवलोक में एक बार कोई समारोह मनाया जा रहा था। उस समय एक ने उठकर अध्यक्ष से निवेदन किया, "प्राचीन काल में विश्वामित्र जैसे ऋषि को हरिश्चन्द्र की सत्यप्रियता की परीक्षा लेनी पड़ी। मेरा विश्वास है कि विभूतिमिश्र एक राजा होने के नाते खुद-ब-खुद इस प्रकार अपनी महानता का प्रचार करवा रहा है। एक बार उसकी भी परीक्षा ले लें, तो उचित होगा। परीक्षा की कसौटी पर कसने पर ही वस्तु-स्थिति का सच्चा ज्ञान होगा। क्यों न कुछ इसका आयोजन बना दिया जाय?"

इस प्रस्ताव को बाकी देवताओं ने मान लिया। उन्होंने एक देवता को दूत बनाकर चंपक देश में भेज दिया। उस देवदूत ने अपना नाम रखा सत्यमूर्ति। जनता के बीच संचार करते हुऐ वह प्रचार करने लगा कि सत्यवचन के पालन में इस भूलोक में उसका सानी कोई नहीं है। उसने अपने कथन के प्रमाण भी प्रस्तुत किये। सत्य-वचन बोलते हुए कई बार उसे किस प्रकार कठिनाइयों का सामना करना पड़ा उसका वह वर्णन करता।

देवदूत ने एक दिन गाँव के दस-बारह लोगों को बुलाकर उनके समक्ष कहा, "कोई दिव्यशक्ति प्रतिदिन मेरे कान में सब से अज्ञात विशेषताओं का परिचय कराती है। इस शक्ति के अनुसार मैं कहता हूँ, कि अमुक भुषणसिंह के मकान के पिछवाड़े में नीम के पेड़ के नीचे एक खज़ाना गड़ा है।"

पहले तो लोगों को विश्वास न हुआ। फिर उन्होंने सोचा, क्यों न प्रत्यक्ष खोदकर देख

"वसुन्धरा"

लिया जाए?

उस स्थान पर खोदने पर लोगों को सचमुच ही खज़ाना मिल गया।

इस घटना के बाद लोग सत्यमूर्ति को देवता के समान मानने लगे। अनेक लोगों ने उसके द्वारा अनेक प्रकार से लाभ उठाया। सत्यकीर्ति ने सत्यमूर्ति की मदद से दो जगह गड़े खज़ानों का पता लगाया और वह मालामाल हो गया। बरसों बीमार पड़ी अपनी माँ की बीमारी को दूर भगाया। उसके घर में लगातार चार कन्याएँ पैदा हुई थीं। सत्यमूर्ति की सहायता के कारण अब उसके एक पुत्र-रत्न मिल गया!

मगर सत्यमूर्ति कुछ लोगों को अछूत बताकर अपने पास फटकने नहीं देता था। वह लोगों के बीच प्रचार करने लगा, "पापी लोग सीधे नरक में नहीं जाते। ऐसे लोग पुनर्जन्म में अछूतों के रूप में जनमकर अपने पिछले जनम के पापों की सज़ा भोगते हैं। इस प्रकार अछूतों के लिये यह पृथ्वी एक कारागार है।"

चंपक राज्य में राजा विभूति ने अनेक प्रकार के सुधार किये थे। वह जो नये सुधार अपने राज्य में लाने की कोशिश कर रहा था, उसमें सत्यमूर्ति बाधा बन गया। विभूतिमिश्र से मानो वह शत्रुता मोल रहा था। इस लिए एक कानून के अनुसार देश में जाति, वर्ग, धर्म इत्यादि भेदभाव के बिना सभी मानवों को समानता का व्यवहार करने पर बाध्य किया गया था। इस कानून का उल्लंघन करनेवाले लोग दण्ड के भागी होते थे।

विभूतिमिश्र क्रमशः अपने राज्य में सब प्रकार के अनाचार दूर करने लगे। लेकिन इस छुआछूत के मामले को दूर करना उनके लिये कठिन साबित हुआ था। राज्य के कानून के अनुसार छुआछूत माननेवालों को कठिन दण्ड दिया जाता था, इसलिये जनता डरती थी। फलतः ऐसे लोग बाहर से भले ही प्रकट न करते, मगर मन में छुआछूत पर विश्वास रखते थे। अब इस सत्यमूर्ति का कथन भी इस विषय का समर्थन करता था; इस कारण प्रत्येक गाँव में अछूतों को अलग रखा जाने लगा।

यह खबर विभूतिमिश्र के कानों तक

पहुँची । उसने तत्काल सत्यमूर्ति को उस से मिलने आने का आदेश दिया ।

"मैं तो जनता की सेवा करनेवाला एक सज्जन पुरुष हूँ । राजा के आदेशों के निबद्ध होकर, मैं जनता को छोड़कर नहीं जा सकता । यदि राजा मुझ से वार्तालाप करना चाहता है तो उचित यही होगा कि वे स्वयं आकर मुझ से मिल लें ।" सत्यमूर्ति ने राजदूत द्वारा उल्टे खबर भिजवायी ।

यह संदेश सुनकर राजा ने भाँप लिया कि यह सत्यमूर्ति कोई साधारण व्यक्ति नहीं है । राजा तत्काल सत्यमूर्ति से मिलने के लिये उसके आश्रम में पहुँचा । आश्रम लोगों से खचाखच भरा हुआ था । वहीं एक पीपल वृक्ष की छाया में चित्रासन रखकर उसपर सत्यमूर्ति पद्मासन में बैठा हुआ था । उसके चेहरेपर दिव्य तेज झलक रहा था ।

राजा विभूतिमिश्र ने सत्यमूर्ति को प्रणाम नहीं किया । इसपर सत्यमूर्ति हँसकर बोला, "तुम्हारे भीतर महाराजा होने का अहंकार बढ़ गया है । क्या यह शिष्टाचार भी तुम नहीं जानते कि, सज्जन पुरुषों को प्रणाम करना चाहिये ।"

इसपर विभूतिमिश्र हँस पड़ा और बोला, "मानवों के बीच अन्तर माननेवाला खुद को सज्जन पुरुष नहीं कहला सकता । छुआछूत का समर्थन करनेवाले आप जैसे व्यक्तियों को मैं प्रणाम नहीं कर सकता ।"

"पगले, छुआछूत का समर्थन करनेवाला मैं नहीं हूँ । हमारे वेद, पुराण तथा इतिहास ही छुआछूत का प्रबोधन करते हैं, उसका समर्थन करते हैं । इसीलिये बात है ।"

आसमान से सर्पों की वृष्टि हुई और फिर वे ईख के रूप में बदल गये। उनको उसने आपस में बाँटकर खाने को कहा। इसी प्रकार कहीं से एक दहाड़ता हुआ बाघ वहाँ आ पहुँचा और सत्यमूर्ति का स्पर्श पाकर बिल्ली में बदल गया।

विभूतिमिश्र ने ऐसे कुछ अद्भुतों को देखने के बाद कहा, "हो सकता है कि तुम्हारी शक्तियाँ अद्भुत् हैं, मगर इन में दिव्यत्व का अभाव है। तुम्हारे भीतर अगर दिव्य शक्तियाँ भरी पड़ी हैं, तो तुम मनुष्यों में छुआछूत का समर्थन नहीं करते। तुम ज़रूर किसी दुष्ट बुद्धि से प्रेरित होकर मेरे देश में आ गये हो। और यहाँ अपनी अद्भुत् शक्तियों का प्रदर्शन करके जनता में छुआछूत का झूठा प्रचार कर रहे हो।"

सत्यमूर्ति ने उत्तर दिया।

"हमारे वेद, पुराण और इतिहास सच्चरित्र का समर्थन करते हैं। जन्म नहीं, बल्कि आचरण से ही वे कुल का विधान मानते हैं। सच्चरित्र व्यक्ति भले ही नास्तिक क्यों न हो, उसको वे महान् ही बताते हैं। तुम जैसे स्वार्थी लोग उनकी ग़लत व्याख्या कर रहे हैं। मैं इस देश के राजा के रूप में आदेश देता हूँ कि, तुम अपने अपराध को स्वीकार कर लो।" विभूतिमिश्र ने कहा।

सत्यमूर्ति ने राजा की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखकर कहा, "देखो, मैं अभी यह प्रमाणित करता हूँ कि, मैं दिव्य शक्तियाँ रखता हूँ।" यह कहकर उसने हवा में हाथ फैलाया और कुछ अद्भुत् दिखाये-सब की देखादेखी

"राजा, तुम अपनी वाचालता बन्द करो।" सत्यमूर्ति क्रोधित होकर बोलने लगा, "राजा, मैं सत्यपालन में राजा हरिश्चन्द्र को मात करनेवाला हूँ। इसकी गवाही तो यहाँ इकठ्ठी यह तुम्हारी प्रजा ही देगी।"

"तुम्हारे क्रोध से मैं डरनेवाला नहीं हूँ। यह जनता भलेही गवाही दे दें, पर मैं तुम्हारे सत्यपालन पर ज़रा भी विश्वास नहीं करता। इस में मेरा विश्वास पाने के लिये तुम को प्रत्यक्ष प्रमाण देना पड़ेगा।" विभूतिमिश्र ने कहा।

राजा की बात सुनकर सत्यमूर्ति ठहाके लगाकर हँस पड़ा और बोला, "अच्छी बात

है । मैं अपने सत्यपालन को प्रमाणित करके तुम्हारी आँखें खोलने के लिए एक उपाय बता देता हूँ । एक शर्त है, इसके अनुसार तुम पूरा एक दिन अछूतों के बीच बिता दो । उस पाप का फल क्या होगा, वह तुम रात को सपने में देख सकते हो । तुम को कल इसी जनता के बीच उस स्वप्न का सच्चा समाचार सुनाना होगा ।''

''ठीक है । मैं अवश्य बताऊँगा । इस प्रकार से ही सही; तुम्हारी आँखें खुल जाएँगी ।'' राजा ने कहा ।

''सुनो, एक बात याद रखो; तुम अगर झूठ बोलोगे तो तत्काल तुम किसी भयंकर चर्मव्याधि के शिकार बन जाओगे ।'' सत्यमूर्ति ने कहा ।

''और यदि तुम ही स्वयं झूठ बोल रहे हो, यह प्रमाणित हो जाए तो ?'' राजा ने पूछा ।

''उस हालत में मैं क्षणभर भी इस राज्य में नहीं रहूँगा । तत्काल अदृश्य हो जाऊँगा ।'' सत्यमूर्ति ने कहा ।

इसके बाद विभूतिमिश्र वहाँ से निकलकर अछूतों की बस्ती में पहुँचा । उन लोगों की हालत देखकर उसका हृदय पसीज उठा । दुखी होकर वह उनसे बोला, ''मेरे राज्य में तुम लोग मनुष्यों की भाँति नहीं, जानवरों की भाँति जी रहे हो । एक राजा की हैसियत से मैं इसे सहन नहीं कर सकता । कल से तुम सब लोग अन्य सब लोगों के साथ समान रूप से जीवन-यापन करो ।''

राजा की इस बात से भयभीत होकर अछूत लोग चिल्ला उठे, ''प्रभु! हमारा यह जीवन भले अपमानजनक क्यों न हो, आप की कृपा

मगर नीन्द में सपने में उसे एक दिव्य पुरुष ने दशर्न देकर कहा, "हे पगले! पृथ्वी लोक में नरक की सृष्टि करने के विचार से स्वर्गवासी देवताओं ने छुआछूत की व्यवस्था की है। क्यों कि पापियों की संख्या अधिक होने के कारण नरक में स्थान की कमी हो गयी। साथ ही पापियों को नरक यातनायें भी उतनी पीड़ादायक साबित नहीं हुई। छुआछूत की यातनायें नरकयातनाओं से भी कहीं अधिक पीडादायक हैं। यह छुआछूत चिरकाल तक चलती रहेगी। इस कानून का उल्लंघन करने के कारण तुम एक दिन रेगिस्तान में फँस कर भूख-प्यास से छटपटाओगे। भविष्य में तुम कभी भी ऐसी ग़लती नहीं करो। कल तुम इस सत्य को जनता के सामने प्रकट करोगे, तो तुम्हारे इस अपराध को प्रथम अपराध मानकर मैं तुम को क्षमा करूँगा।"

"और यदि मैं अपने सपने के बारे में झूठ कह दूँ तो?" विभूतिमिश्र ने पूछा।

"ऐसी हालत में तो तुम एक भयानक चर्मव्याधि से पीडित होकर अपने ही राज्य में अछूतों से भी निकृष्ट जीवन बिताओगे। तुम्हें वैसे हरिश्चन्द्र के समान सत्यवादी के रूप में जो ख्याति प्राप्त हुई है उसका भी विचार करो। यह तुम्हारी कसौटी का समय है। इस परीक्षा में विजय प्राप्त कर अपने यश को पृथ्वी-लोक में सदा के लिये अमर बनाओ।" दिव्य-पुरुष ने उसे समझाया।

"हे दिव्यपुरुष, मैं एक मानव हूँ। देवत्व को चाहिये कि मानव को मानवता के लिये

से हमें अन्न-जल की कोई कमी नहीं है। हम चाहते हैं कि, हमारे कारण आप को किसी प्रकार का कष्ट न हो। वास्तव में हम किसी शाप से पीड़ित हैं, हम को ऐसे ही जीने दीजिये।"

मगर विभूतिमिश्र ने उनकी बात नहीं मानी। उस दिन वह अछूतों के साथ रहे। वहीं स्नान किया और उन लोगों ने प्यार से जो खाना खिलाया, वही खाया। भोजनोपरान्त उन्हीं लोगों के बीच लेटकर वह सो गया। सोने से पूर्व उन्होंने अपनी कुलदेवी का स्मरण करके संकल्प किया, "माते! मुझे सब से अधिक प्रिय है मेरी प्रजा। इसलिये मुझपर इतनी कृपा करो कि आज की रात मैं कोई अच्छा सा सपना देखूँ।"

प्रेरित करें, न कि उसे समूल नष्ट करने का प्रयास करे। सुनिये, मेरे अन्दर की मानवता को दबाने का प्रयत्न करनेवाले देवत्व पर मैं विश्वास नहीं करता; उसकी कोई परवाह भी नहीं करता।" विभूतिमिश्र ने कहा।

इसके बाद राजा जाग पड़ा। फिर अपने सपने को याद कर वह बोला, "माते कुलदेवी! मैं अपनी प्रजा के कल्याणहेतु झूठ बोलने का निश्चय कर चुका हूँ। इससे प्राप्त होनेवाले चर्मव्याधि का दुख भोगने के लिये मैं तैयार हूँ और झूठ बोलने के कारण अपनी कीर्ति भी गँवाने की मेरी तैयारी है। मुझे इतना ही बर दो कि वह चर्मव्याधि बाहर प्रकट न हो। बस, मेरी इतनी ही प्रार्थना है।" यह कहते हुए उसने अपनी कुलदेवी की प्रार्थना की।

दूसरे दिन सबेरे विभूतिमिश्र नदी में स्नान कर के सत्यमूर्ति के आश्रम में पहुँचा। उससे कहा, "रात सपने में मुझे श्रीमन्नारायण ने दर्शन देकर बताया कि, छुआछूत महान् पाप है। यह सत्यमूर्ति राक्षसी अंश को लेकर पैदा हुआ है। राक्षसी मायाओं से वह जनता को धोखा दे रहा है।"

बस, दूसरे ही क्षण सत्यमूर्ति अदृश्य हो गया। जनता ने अपने राजा का जयजयकार किया। विभूतिमिश्र किसी चर्मव्याधि का शिकार भी नहीं बना।

उस रात को दिव्य पुरुष ने राजा को सपने में पुनः दर्शन देकर कहा, "कुलदेवी तुम्हें दुष्ट सपने देखने से रोक न पायी; पर उसी पर विश्वास करके जनता के कल्याण के हेतु तुम एक ओर चर्मव्याधि के कष्ट भोगने और दूसरी ओर तीनों लोकों में तुम्हें पहले से प्राप्त यश का भी त्याग करने को तैयार हो गये हो। मुझे लगा था कि अपने सत्य-वचन के व्रत को निभाने के लिए और चर्म-व्याधि के डर से झूठ नहीं बोलोगे। तुम जैसे निःस्वार्थ राजा की मानवता के सामने मेरा देवत्व भी फीका पड़ गया। छुआछूत भगवान के द्वारा सृजित नहीं है। तुम्हारी परीक्षा लेने के लिये ही मैं ने ऐसा कहा था। आज से इस राज्य में सर्व मानवसमाज में समानता स्थापित होगी।"

अमीर का चन्दा

एक बार अमीर शिवप्रसाद सख्त बीमार हुआ । उसने वैद्य से कहा, "इस कम्बख्त बीमारी के कारण शारीरिक पीड़ा के साथ मेरा दिमाग भी मानों अपना सन्तुलन खो बैठा है । मैं जो भी कुछ कहना चाहता हूँ, सो कह नहीं पाता और वास्तव में जो कहना नहीं चाहता, उसे कह बैठता हूँ ।"

"आप निराश न हूजिये । मैं अपनी सारी दिमागी ताकत लगाकर आप की बीमारी भगा दूँगा ।" वैद्य ने आश्वासन दिया ।

"ठीक है । यदि आप ऐसा करेंगे तो आप के चिकित्सालय के लिये मैं एक लाख रुपये चन्दा दे दूँगा ।" अमीर ने कहा ।

कुछ दिनों की चिकित्सा के बाद अमीर स्वस्थ हो गया । एक दिन वैद्य अमीर को देखने आया और बोला, "मैं आप को एक बात की याद दिलाता हूँ । बीमारी के समय आप ने मेरे चिकित्सालय के लिये एक लाख रुपये चन्दा देने की बात की थी ।"

"सच है! मेरी असली बीमारी ही यह है । मैं जो कहता हूँ, सो कह नहीं पाता और जो कहना नहीं चाहता, सो कह देता हूँ ।" अमीर ने उत्तर दिया ।

पिता और पुत्र

३

सत्यनारायण बाज़ार से जब घर लौटा, तब अँधेरा फैला हुआ था। घर के दीप जल रहे थे। उसके घर के सामने अँधेरे में खड़ा एक लड़का सीटी बजा रहा था। उसे देख सत्यनारायण एकदम उत्साह से भर उठा। सीटी बजाने वाला उसका दोस्त रंगनाथ था। प्रत्युत्तर में सत्यनारायण ने भी सीटी बजाना चाहा, मगर लाख कोशिश करने पर भी वह सीटी नहीं बजा सका! सत्यनारायण को अपने आप पर बडा गुस्सा आया; फिर लाचार होकर वह पुकार उठा, "रंगनाथ, अरे रंगनाथ!"

रंगनाथ ने उसकी दिशा में देखा अवश्य, पर उसको नहीं देखा। उसे उस धुँधली रोशनी में एक स्थूलकाय, गंजे सिर, सफेद मूँछें व चश्मेवाला कोई बुज़ुर्ग दिखाई दिया। उसने सोचा– "अरे, यह तो सत्यनारायण के पिताजी हैं। इनके सामने जाना बिलकुल ठीक नहीं। बेचारे सत्यनारायण को भुगतनी पड़ेगी। यहाँ से भाग निकलना ही अच्छा!

"अरे रंगनाथ, यह तुम क्या देख रहे हो?" सत्यनारायण ने उसके समीप जाते हुए कहा।

मगर अपने करीब आनेवाला व्यक्ति सत्यनारायण का पिता है, यह जानकर रंगनाथ के होश उड़ गये! उसके साथ दोस्ती रखने से मना करते हुए सूर्यप्रसाद ने कई बार सत्यनारायण को पीटा था। इसी कारण अब

जब भी कभी वह सत्यनारायण से मिलने आता, तब घर के बाहर से ही संकेत के रूप में एक विशेष प्रकार से सीटी बजाता था । उसे सुनकर सत्यनारायण चुपके से बाहर खिसक आता था । अब उसने सोचा कि, अब यह सीटी का रहस्य भी सूर्यप्रसाद पर प्रकट हो चुका है । और इसी कारण अब रंगनाथ डर से अँधेरे में कहीं भाग खड़ा हुआ ।

"अबे भागते क्यों हो ? मैं तो तुम्हारा दोस्त हूँ ?" यह कहते हुए सत्यनारायण चिल्लाने लगा । मगर उस पर बिलकुल ध्यान दिये बगैर ही रंगनाथ भाग गया ।

"अजी पंडितजी, क्या आप अपने बेटे को पुकार रहे हैं ?" किसी ने उसे रोका । यह देख बिना कुछ कहे सत्यनारायण उस गली के मोड़ पर रुके बिना अपने घर के अन्दर घुस गया ।

उस रात सत्यनारायण अपने पिता की बगल में सोया ।

"यह जीवन तो बड़ा ही अच्छा है । हाथ में पर्याप्त धन है, हर कोई अपना आदर कर रहा है । बस मुश्किल यही है कि अपरिचित लोगों से पाला पड़े, तो उनसे बात कैसे करनी चाहिये ! अपने जान पहचान के दोस्त मुझे देख घबरा रहे हैं ! फिर भी यह ज़िन्दगी ही बेहतर है । बच्चा बनकर रहने से बढ़कर कोई और पाप नहीं है । यह दुनिया तो बड़ों की ही है ।" सत्यनारायण ने लेटे लेटे मन में सोचा ।

उस रात को सत्यनारायण को नीन्द नहीं आयी । वैसे संध्या होते ही वह हर रोज़ सो जाता था; मगर आज रातभर वह बिस्तर पर पड़ा करवटें बदलता रहा । लेकिन इधर सूर्यप्रसाद का मन आन्दोलित होते हुए भी वह अपने बिस्तरपर रातभर आराम से सोया ।

सत्यनारायण की नीन्द तड़के ही टूट गयी । वह बिस्तर से उठा और घर में इधर-उधर चक्कर काटने लगा । कमरे में जाकर आइने में उसने अपना गंजा सर और सफेद मूँछें देखीं । यह दृश्य भी उसे चष्मा पहनने पर ही दिखाई दिया!

सूर्योदय के उपरान्त एक घण्टा बीत गया, पर सूर्यप्रसाद की नीन्द नहीं खुली । इतने में स्कूल से एक लड़का आया । वह सत्यनारायण का परिचित लड़का था । फिर

भी वह उसे इस नये रूप में पहचान न पाया । उसने कहा, "अजी, आप के बेटे सत्यनारायण को बुला लाने के लिये मास्टरजी ने मुझे भेजा है ।"

सूर्यप्रसाद बिस्तर से उठा । अपनी हररोज़ की आदत के मुताबिक उसने रसोइन को पुकारा । मगर उसकी पुकार सुनने के बावजूद भी रसोइन पर कोई असर नहीं हुआ । इतने में उसके पुत्र की आयु का कोई लड़का उस कमरे में आया और उसने सूचना दी–"अरे सत्यनारायण, मास्टरजी ने तुम्हें बुलाया है ।"

यह बात सुनकर सूर्यप्रसाद के मन में दुख के साथ क्रोध भी उमड़ पड़ा ।

"छीः, छीः । कौन हो तुम ? भागों यहाँ से । तुम्हारे मास्टरजी को ही मुझ से मिलने के लिये कहो, जाओ यहाँ से ।" उसने डाँटते हुऐ कहा ।

लेकिन अन्त में लाचार होकर सूर्यप्रसाद को स्कूल जाना ही पड़ा । स्कूल से जो लड़का आया हुआ था, वह बड़ा ही चतुर और ताक़तवर था । उसके नाम से ही सारे लड़के थर थर काँपने लगते थे । कोई लड़का स्कूल नहीं गया, तो उसे बुला ने के लिए मास्टरजी इसी लड़के को भेज दिया करते थे । अगर कोई लड़का सीधी बातों से न मानता तो वह बलशाली लड़का उसके हाथ बाँधकर खींचते खींचते उसे स्कूल में जाया करता । उसके आगे सब अपनी हार मानते और चुपचाप उसके साथ स्कूल चले जाते । आज सूर्यप्रसाद भी उस से बच नहीं सका ।

सूर्यप्रसाद को देखते ही मास्टरजी ने बेंत
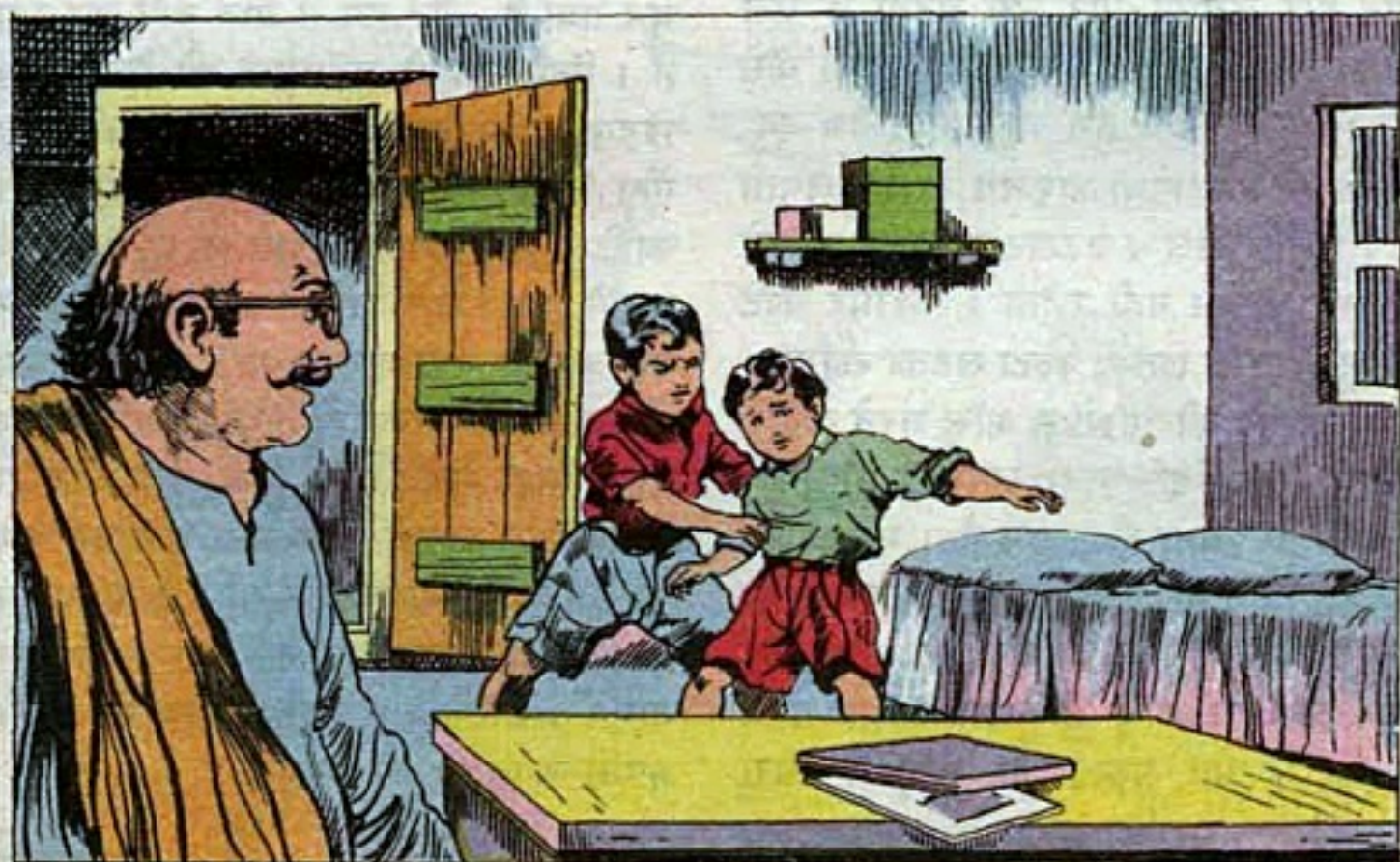
उठाकर उसके दोनों हथेलियों पर चार-चार बार मार लगायी और उसे घुटनों के बल बिठाकर धमकी दी, ''तुम्हारे पिताजी कैसे सज्जन पुरुष हैं । तुम जैसे बदनसीब का उनके घर जन्म होना आश्चर्य की बात लगती है । तुम्हारे खेल व नटखटपन बढ़ते जा रहे हैं-अब मैं चुप नहीं रहूँगा । फर्शपर काँटे बिछाकर तुम्हें छत से उल्टा लटका रखूँगा ।

सूर्यप्रसाद की आँखों से आँसू झरने लगे । उसको लगा—इस प्रकार अपमान सहने की अपेक्षा मर जाना ही उत्तम है । मास्टरजी, उनका पढ़ाने का तरीका, वहाँ के बच्चों का बर्ताव वगैरह सब देखकर सूर्यप्रसाद को आश्चर्य तथा क्रोध भी आया । यह कैसा मास्टर है-यह पढ़ाई भी कैसे है! मेरा सत्यनारायण बेचारा क्या यही अर्थहीन शिक्षा पा रहा है?

थोड़ी देर बच्चों ने पहाड़े याद किये; इसके बाद महीनों तथा तिथियों के नाम रटे । इसके बाद मास्टरजी ने चेतावनी दी की, शोर गुल न मचाएँ । फिर खुद कुर्सी पर बैठ कर दीवार से सिर टिकाकर खर्राटे भरने लगे । इस बीच उनके मुँह में एक मक्खी भी चली गयी । मगर मास्टरजी को कुछ पता ही नहीं चला ।

थोड़ी देर बाद बच्चों ने सूर्यप्रसाद को घेर लिया । सब कोई उसे 'सत्यनारायण' कहकर ही पुकार रहे थे । मगर दरअसल वह किसी का भी नाम नहीं जानता था । किसी का चेहरा तक उसने आज तक नहीं देखा था । मगर बच्चे बेचारे यह बात क्या जाने? उन्होंने सोचा कि यह सत्यनारायण घमण्डी बन गया है, और हम से बात नहीं कर रहा है । फिर उन्होंने सूर्यप्रसाद को चिढ़ाना व छेड़ना शुरू किया । किसीने उसका कान ऐंठा, तो किसी ने उसकी जाँघ पर चिउँटी काटी । सारे कम्बख्त उसे नाना प्रकार से सताने लगे । उसे बड़ा ही क्रोध आया, मगर वह कर ही क्या सकता था? बेचारा दुखी होकर मन मसोसकर रह गया । आखिर जब उससे सहा नहीं गया, तब वह ज़ोर से चिल्लाया । बच्चों ने कल्पना तक नहीं की थी, कि वह इतना चिल्लाएगा । उन्हें मालूम था कि चिल्लाहट सुन कर मास्टरजी जग जाएँगे । इसलिये हर कोई चुपके से अपनी अपनी जगह पर जा बैठा ।

मास्टरजी जाग पड़े । जागते ही बेंत लेकर वे सूर्यप्रसाद को बेरहमी से पीटने लगे । उसे लगा कि अब वह पागल होता जा रहा है । आखिर गुस्से में आकर वह गाली देने लगा, "अरे कम्बख्त, भाड़ में जाये तेरी पढ़ाई और तू भी! इसी पढ़ाई के लिये मैं ने इतना धन तुम्हें दिया है? देखो, अब मैं तेरा कैसे बुरा हाल कर देता हूँ । हर बात पर तू बच्चों को पीटता है, तेरे हाथ टूट जायँ ।"

मास्टरजी को हैरानी में चुपचाप गालियाँ सुनते देख बच्चे खिलखिलाकर हँसने लगे । मास्टरजी पलभर के लिए चकित रह गये । मगर न जाने उन्होंने क्या सोचा; उन्होंने सूर्यप्रसाद को दीवार से सट कर घुटनों के बल बैठ जाने को कहा और फिर पलपल सूर्यप्रसाद का पराभव बढ़ता गया ।

अब मास्टर ने उसकी परीक्षा लेना शुरू किया । मगर उनके पूछे कुछ सवालों के जवाब सूर्यप्रसाद ने बड़ी आसानी से दे दिये । कुछ सवालों के जवाब वह न दे सका, क्योंकि वे जवाब किताब पढ़ने पर ही दिये जा सकते थे । ऐसी हालत में सूर्यप्रसाद उनके जवाब दे भी तो कैसे?

अब घुटनों के बल बैठना सूर्यप्रसाद को बड़ा ही दूभर प्रतीत हुआ । साथ बच्चों ने भी उस का मज़ाक उड़ाना शुरू किया । मगर मास्टर ने उन शरारती बच्चों को डाँटा तक नहीं ।

इसके बाद मास्टरजी ने गणित के कुछ सवाल दिये । मास्टर का पूर्ण सवाल पूछने से पहले ही सूर्यप्रसाद उनके जवाब देने लगा । मास्टरजी को इस पर बड़ा ही अचरज हुआ ।
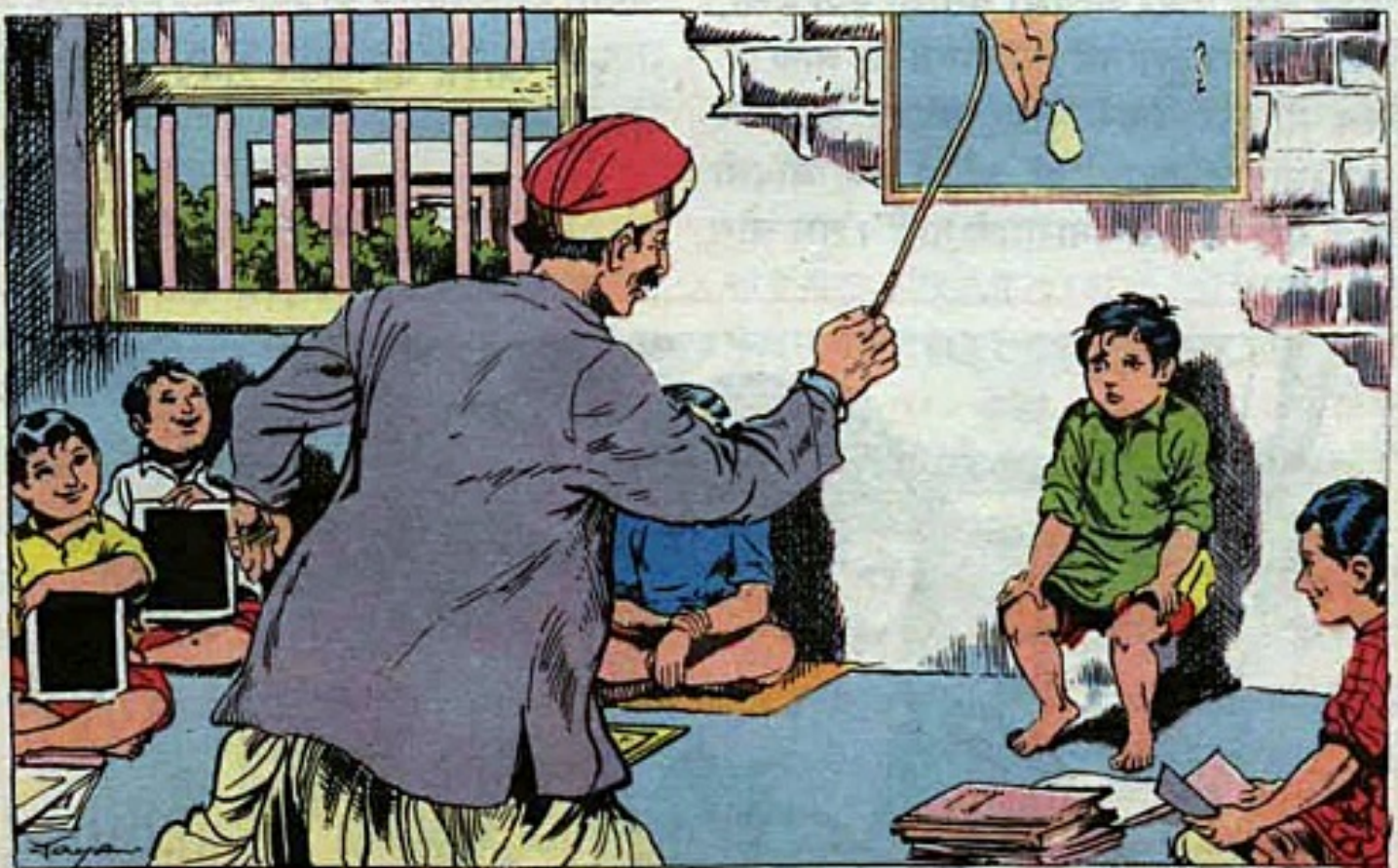
वैसे सत्यनारायण गणित में बहुत ही कच्चा था मगर आज उसे तत्काल मौखिक उत्तर देते देख मास्टरजी विस्मय में आ गये ।

"अरे बदमाश, गणित में कुशल होकर भी आज तक तुम गणित में कच्चे होने का स्वांग रचते रहे?" इतना कहकर मास्टरजी ने पुनः उसकी पीठ पर बेंत बरसाना शुरू किया ।

सूर्यप्रसाद अब दोपहर होने का इन्तज़ार करने लगा, ताकि जल्दी घर भाग जाये । आखिर दोपहर हुई-मास्टर ने छुट्टी दे दी । साधारणतया बच्चे मास्टरजी की मार खाकर उसे भूल भी जाते थे, मगर इतनी उम्रवाला सूर्यप्रसाद उसे कैसे भूल सकता? सब बच्चे घर की ओर दौड़ने लगे । सूर्यप्रसाद को छोड़ बाकि सब उत्साह में थे ।

कुछ लड़के रास्ते में सूर्यप्रसाद को घेर कर पूछने लगे, "अरे सत्यम्! बताओ क्या हुआ, तुम तो बिलकुल नये नये लगते हो आज?" सब ने ज़ोर देकर पूछा, इसपर खीझकर सूर्यप्रसाद ने कहा, "हाँ, हाँ, मैं नया आदमी हूँ । मेरा नाम सत्यनारायण नहीं । तुम लोग मुझे उस नाम से मत पुकारो ।"

'घर पहुँच कर मुझे क्या करना होगा? घर में सत्यनारायण क्या करता होगा? शायद अब तक उसका रहस्य खुल गया होगा ।' इस विचार के आते ही सूर्यप्रसाद के मन में पुनः आशा अंकुरित हुई । 'यह बात सही है कि अगर वह अपने को सूर्यप्रसाद कहेग, तो कोई उसपर विश्वास नहीं करेगा । लेकिन सत्यनारायण को देख कर कोई यह भी नहीं मानेगा, कि वह असल में मैं हूँ । उस के उनके मित्र मिलने आयेंगे । अनेक मामलों में चर्चा चलाएँगे, उन सब का ज्ञान सत्यनारायण को कहाँ है । इसी कारण अब तक उसकी पोल खुली हुई हो, और सत्यनारायण का रहस्य खुल गया हो, तो अपना निजरूप आसानी से लोगों पर प्रमाणित होगा ।'

इसी आशा को लेकर सूर्यप्रसाद घर की तरफ़ बढ़ा ।

(अगले अंक में समाप्त)

अक्लमन्द

मायावती नगरी में सोमसुन्दर नाम का एक संपन्न गृहस्थ रहता था। उसके पड़ोस में शरभ नाम के एक धनी किसान का घर था। किसी छोटीसी बात को लेकर इन दोनों पड़ोसियों में झगड़ा हुआ था। मगर उस बात को मन में रखकर शरभ ने सोमसुन्दर के प्रति अपनी शत्रुता बढ़ायी थी। कुछ और घटनाओं के कारण यह शत्रुता दिन-ब-दिन बढ़ती ही गई। सोमसुन्दर को इस बात का बड़ा दुख था।

कुछ दिनों के बाद सोमसुन्दर ने अपने मन में निश्चय कर लिया कि पड़ोसी के साथ बैर रखना उचित नहीं है, उसके साथ समझौता कर लेना ही ठीक होगा। मगर वह इस शंका से तुरन्त शरभ के पास नहीं पहुँचा कि, अगर वह खुद समझौते का प्रस्ताव लेकर जाएगा तो बहुत संभव है कि वह शरभ की दृष्टि में गिर जाएगा।

एक दिन सारंग नामका एक गृहस्थ सोमसुन्दर से थोड़े रुपये उधार माँगने गया।

यह मौक़ा पाकर सोमसुन्दर ने उसको छेड़ा, "बहुत से लोगों का विचार है, कि तुम बड़े ही अक्लमन्द हो, पर मैंने तो आजतक तुम्हारी अक्लमन्दी का कोई सबूत देखा नहीं है।"

उसकी बातें सुनकर सारंग हँस पड़ा और बोला, "महाशय, मैं आप से रुपये माँगने आया हूँ। आप किसी भी रूप में मेरी परीक्षा ले सकते हैं।"

"तब तो सुन लो,—यदि तुम शरभ के साथ मेरा समझौता करवा दो, तो निश्चय ही मैं तुम को अक्लमन्द मानूँगा।" सोमसुन्दर ने कहा।

सोमसुन्दर की बात मानकर सारंग वहाँ से चला गया।

दूसरे ही दिन शरभ सोमसुन्दर के घर पहुँचा और बोला, "देखो सोमसुन्दर, इसके पूर्व हमारे बीच जो कुछ हुआ, उसको भूल

शीला भार्गव

जाओ। आज से हम दोनों मित्र बनकर रहेंगे। हाँ, मैं कहना भूल ही रहा था कि, मेरे पुत्र के विवाह का रिश्ता कायम हो गया है; अगले महीने में ही मुहूर्त है। आप को ज़रूर इस समारोह में सम्मिलित होना है।" इतना कहकर शरभ वहाँ से चल गया।

शरभ में यह परिवर्तन देखकर सोमसुन्दर को बड़ा ही विस्मय हुआ। सारंग के आते ही उसने उससे पूछा, "सारंग, तुम ने शरभ से क्या कहा?"

मन्दहास करते हए सारंग बोला, "पड़ोसी के साथ वैर मोल लेने से भविष्य में होनेवाली हानि का सोदाहरण परिचय मैं ने उसको दे दिया। साथ ही मैं ने उसे यह भी समझाया कि, यदि हमें यह साबित करना है कि हमारे सामनेवाले व्यक्ति से हम ही ज़्यादा अक्लमन्द है, तो अत्यन्त व्यवहार कुशलता से अपनी शत्रुता को मित्रता में परिवर्तित करना चाहिये।"

"तो इस का मतलब यही हुआ न, कि तुम्हारी दृष्टि में शरभ मुझ से ज़्यादा अक्लमन्द है?" क्रोधित होकर सोमसुन्दर ने पूछा।

"मगर आप तो शरभ से भी ज़्यादा अक्लमन्द है। नहीं तो, आप पहले ही मुझे शरभ से समझौता कराने कैसे भेज देते?" सारंग ने कहा।

इस उत्तर से संतुष्ट होकर सोमसुन्दर ने कुतूहल से पूछा, "तब तो बताओ, हम दोनों में कौन ज़्यादा अक्लमन्द है?"

"निश्चय ही आप! क्यों कि मैं एक ज़रूरी सहायता के लिये आप के पास आया। आप ने मेरी दुर्बलता को पहचान कर उसका योग्य फायदा उठाने के विचार से बड़ी अक्लमन्दी से आप दोनों के बीच समझौता कराने में मेरा उपयोग किया।"

सारंग के इस उत्तर पर सोमसुन्दर हँस पड़ा और बोला, "दरअसल, तुम्हीं ज़्यादा अक्लमन्द हो सारंग।" और आवश्यक धन देकर उसे बिदा किया।

जयकीर्ति का निर्णय
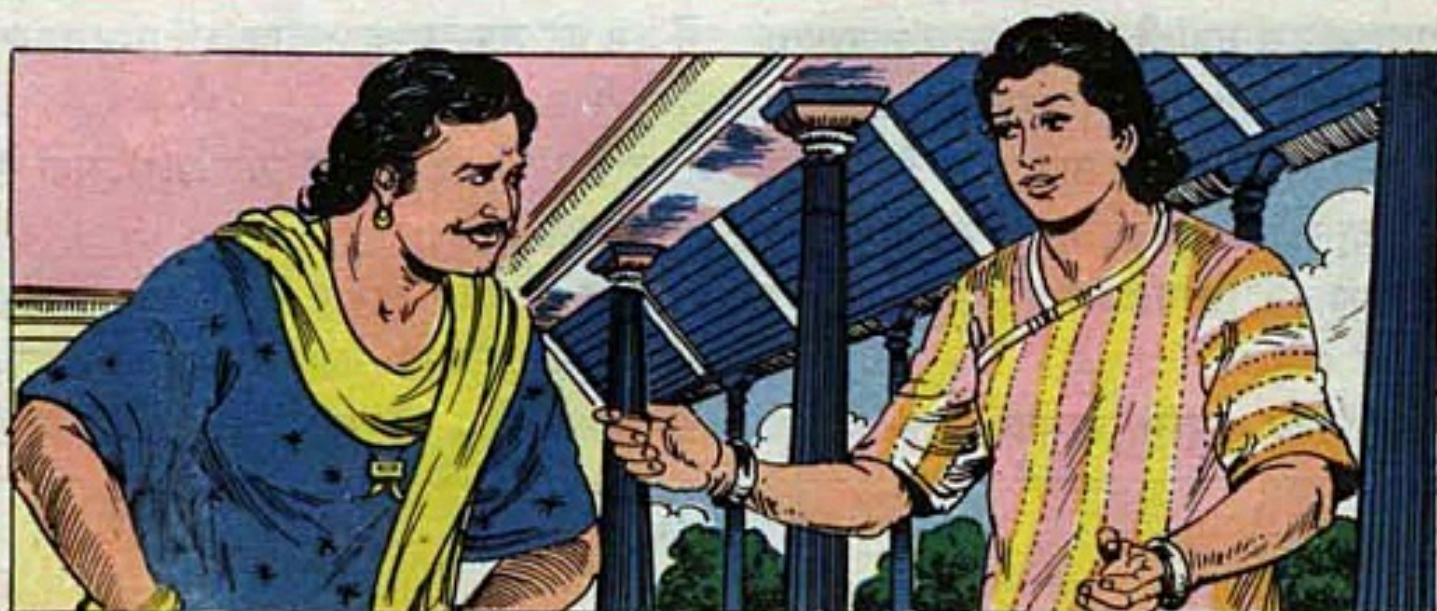
दृढव्रती विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आये। पेड़पर से शव को उतारकर उन्होंने अपने कंधेपर डाल लिया और हमेशा की तरह मौन होकर वे स्मशान की और चलने लगे। इसपर शव में वास करनेवाले बेताल ने कहा, ''राजन्, इस भयानक स्थान पर रात्रि के समय आप जो कष्ट उठा रहे हैं उनको देख मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है। आप को इस कार्य के लिये प्रवृत्त करनेवाला किस प्रकृति का है यह बात मैं नहीं जानता। मगर मेरे मन में यह शंका ज़रूर उत्पन्न हो रही है कि आप ने यह जो संकल्प किया है, उसको साधने की आप की यह लगन कार्य की समाप्ति तक लगी रहेगी या नहीं। क्यों कि मानव प्रकृति ही चंचल है। तिसपर राजाओं के मन तो अत्यधिक चंचल रहते हैं। मेरे इस विधान के उदाहरण में मैं तुम को विजयपुरी के युवराज जयराज की कहानी सुनाता हूँ, जो अपनी अर्धांगिनी के चुनाव में चित्त-

बेतालकथा

विकलता का शिकार हो गया था । अपने श्रमों को भुलाने के लिए यह कहानी सुन लो ।''

बेताल कहानी सुनाने लगा ।

विजयपुरी के राजा महेंद्रवर्मा के एक मात्र पुत्र जयशील था । महेन्द्रवर्मा ने एक दिन जयशील को अपने गुप्त कक्ष में बुलाकर कहा, ''देखो जयशील, तुमने सभी क्षत्रियोचित कलाओं में प्राविण्य प्राप्त किया है इस बात से मैं बहुत ही प्रसन्न हूँ । अब मैं तुम्हारा विवाह रचाना चाहता हूँ । हर पिता की यह इच्छा होती है कि वधू बनकर आनेवाली पराये घर की कन्या पति के अनुरूप हो । उसके कारण खानदान की इज़्ज़त बढ़े । वह नये घर में सुख-समृद्धि बरसाए । घर के हर व्यक्ति को वह सुख प्रदान करे । वह घर का आभूषण बन बैठे । मेरी यही इच्छा है कि मेरी होने वाली पुत्रवधु गुणवती और दयालु हो । वह भले ही किसी राजवंश की न हो—मुझे कोई हर्ज़ नहीं । राजवंश की कन्याएँ ही कुल का उद्धार कर सकती हैं सो बात नहीं । किसी साधारण कुल की कन्या भी सुसंस्कारित हो तो अपने पति के घर को चमका सकती है ।''

''पिताजी, क्या आप ने अपनी पुत्रवधु का चुनाव कर लिया है?'' जयशील ने पूछा ।

''नहीं, फिर भी मैं ने अपने बचपन के मित्र कात्यायनी देश के राजा इन्द्रसेन की कन्या वैजयंती को जब उसकी दस साल की उम्र में देखा था, तब उसे देख मैं बहुत ही प्रसन्न हुआ था । अब वह युक्तवयस्का है । मुझे लगता है कि वह सब प्रकार से तुम्हारे लिये योग्य पत्नी प्रमाणित होगी । चाहो तो तुम कात्यायनी जाकर राजमहल में थोडे दिन बिताओ और राजकुमारी को परखकर लौट आओ । विवाह के पहले वर-वधू दोनों को एक दूसरे को खूब परखना चाहिए । दोनों की स्वाभाविक वृत्तियाँ मिलनी चाहिए । उनकी रुचियाँ एक-सी होनी चाहिए । नहीं तो विवाह के अनन्तर दोनों एक दूसरे को दुखी बना सकते हैं ।'' हँसते हुए राजा महेन्द्रवर्मा ने सुझाया ।

''अच्छी बात है पिताजी, मैं अवश्य वहाँ जाऊँगा । मगर युवराज जयशील बनकर नहीं, बल्कि एक वणिक् के रूप में । आप मुझे

थोड़े दिन इस प्रकार गुज़ारने की अनुमति दीजिये। मैं अपना परिचय दिये बिना ही युवरानी के बारे में जानकारी हासिल करके लौटूँगा। अगर युवरानी मुझे सब तरह से अनुकूल जँची तो मैं आपके प्रस्ताव को मंजूर करूँगा। फिर आप उसके पिता से बात कर सकते हैं।" जयशील ने एक और ही तान छेड़ी।

"ठीक है; मगर अपने अंगरक्षकों के रूप में तुम और दो आदमियों को साथ लेते जाओ। दूसरी जगह जाते समय हमेशा कोई साथ रहे। कब मदद की ज़रूरत हो कहा नहीं जा सकता।" राजा ने सूचना की।

अगले ही दिन जयशील और उसके दो अंगरक्षक व्यापारियों के वेष में कात्यायनी नगर पहुँचे और वहाँ की एक सराय में उन्हों ने दो कमरे किराये पर ले लिये। एक में जयशील और दूसरे में दो अंगरक्षक रहने लगे। सराय के मालिक को उन्होंने बताया कि सुदूर देश से वे लोग व्यापार के सिलसिले में इस नगर में आये हुए हैं।

दुर्भाग्यवश दूसरे ही दिन जयशील तीव्र बुखार का शिकार हो गया। दयालु प्रकृति का सराय-मालिक जयशील की हालत पर रहम खाकर उसको अपने घर ले गया और उस नगर के विख्यात वैद्य को बुलवा भेजा।

जयशील की ठीक तरह से जाँच करके वैद्य ने कहा, "रोगी की निगरानी बड़ी ही सतर्कता से करनी होगी। मैं अभी जो दवाई दे रहा हूँ, उसे कल सबेरा होने तक हर घंटे एक बार पिलाना होगा। वरना जान का ख़तरा है।" इस प्रकार चेतावनी के साथ दवा देकर वैद्य चला गया।

सराय के मालिक की पत्नी का देहावसान हो चुका था। घर में उसकी अकेली उपवर कन्या इन्दुमती ही थी। वह रात भर जागकर वैद्य के कहे अनुसार जयशील को हर घण्टे दवा पिलाती रही। केवल उसी रात ही नहीं, बल्कि अगले एक सप्ताह भर भी उसने वैद्य के सुझाव के अनुसार उसकी परिचर्या की।

सातवें दिन बुखार तो उतर गया; मगर जयशील अत्यंत कमज़ोर हो गया था। उसको पूर्णरूप से स्वस्थ होने तक एक सप्ताह और विश्राम की ज़रूरत थी। सारे दिन जयशील के पास रहकर इन्दुमती ने बड़े

प्यार से उसकी सेवा की । उस के उत्तम व्यवहार और दयालु स्वभाव पर जयशील मुग्ध हो उठा । बीमारी की अवस्था में इन्दुमती ने उसकी जैसी सेवा की वैसी शायद माँ वा सगी बहन भी शायद न कर पाती । उसकी हर कृति में आत्मीयता लबालब भरी होती । साथ ही उसने यह भी भाँप लिया, कि इन्दुमति उससे प्यार करने लगी है । इन्दुमती के सुखद सहवास में दो सप्ताह दो दिन के समान बीत गये । जयशील को लगा कि मानो वह अपने घर में है ।

जयशील जब पूर्ण रूप से स्वस्थ हुआ, तब एक दिन इन्दुमती को बुलाकर उसने पूछा, "बताओ, तुम राजपरिवार के किसी व्यक्ति से परिचित हो? अगर ऐसा हो तो मैं तुम से एक नाज़ुक काम करवाना चाहूँगा ।"

"राजपरिवार के सभी सदस्य मेरे परिचित हैं । युवरानी वैजयन्ती की निकट सहेलियों में मैं भी एक हूँ । हररोज़ शाम को थोड़ी देर के लिये मैं राजमहल में जाकर वैजयन्ती से गपशप करती हूँ । आप के अस्वस्थ होने के कारण ही मैं पिछले दो सप्ताह वहाँ नहीं जा पायी ।" इन्दुमती ने जानकारी दी ।

"तब तो तुम्हें मेरी एक छोटी सी मदद करनी होगी ।" जयशील ने कहा ।

"क्या है वह?" इन्दुमती ने पूछा ।

"तुम्हें इस बात का पता लगाना होगा कि तुम्हारी यह राजकुमारी किसी राजकुमार से विवाह करने की इच्छा तो नहीं रखती?" जयशील ने कहा ।

"इस रहस्य से आप का क्या मतलब? राजकुमारी भले ही किसी एक राजकुमार से प्यार करती हो या दो, आपको इस से क्या लेना-देना?" इन्दुमती ने आश्चर्य में आकर पूछा ।

विजयपुरी का युवराज जयशील मेरा अभिन्न मित्र है । तुम्हारी युवरानी के साथ वह विवाह करना चाहता है । फिर भी वह अभी तक निश्चित निर्णय पर नहीं पहुँचा है । उसके मन में यह शंका है कि कहीं वह और किसी को तो नहीं चाहती? इसलिए उसने मुझ से कहा है कि राजकुमारी अगर दूसरे किसी से प्यार न रखती हो, तभी जयशील उसके साथ विवाह का प्रस्ताव रखेगा ।" जयशील ने कह दिया ।

"ऐसी बात है? तब तो आप मुझे दो-तीन दिन की मोहलत दीजिये । मैं राजकुमारी से बातों बातों में इस बात का पता करूँगी । मेरे लिए यह कोई मुश्किल काम नहीं है । हम सखियाँ राजकुमारी के साथ खूब दिल खोल कर बातें करती हैं । राजकुमारी भी दिल की बात दिल में नहीं रखती । सखियों के बीच वे खूब खुल कर बातें करती हैं । आपके उद्देश्य को मन में रखकर मैं आप को सही बात से परिचित कराऊँगी ।"

"ठीक है ।" जयशील ने मान लिया ।

उस दिन से इन्दुमती पुनःश्च राजमहल में जाने लगी । तीसरे दिन संध्यासमय जब वह राजमहल से लौट रही थी, तब उसने अपने पिता को उसकी प्रतीक्षा में खड़ा पाया । पिता ने इन्दुमती से पूछा, "बेटी, तुम को मालूम है, हमारे घर में अतिथि बनकर रहनेवाला आदमी कौन? विजयपुरी के युवराज के अंगरक्षकों ने मुझे बताया कि वे ही साक्षात् युवराज जयशील हैं ।"

"ओह, ऐसी बात है!" इन्दुमती ने किसी प्रकार का उत्साह दिखाये बिना कहा ।

"मगर वे एक साधारण व्यक्ति के रूप में हमारे नगर में क्यों रह रहे हैं, यही मेरी समझ में नहीं आ रहा है ।" पिता ने विस्मय से कहा ।

"पिताजी, वह कारण मैं जानती हूँ । वे हमारी युवरानी से विवाह करना चाहते हैं । मगर प्रस्ताव रखने से पहले वे यह जानना चाहते हैं कि राजकुमारी को किसी और

युवराज से प्यार तो नहीं है? इस बात का पता करने की अभ्यर्थना उन्हों ने मुझ से की, इसीलिये मुझे उन के हमारे नगर आने का कारण मालूम हुआ ।" इन्दुमती ने सही बात बता दी ।

"तो फिर बताओ, तुम ने क्या पता किया?" पिता ने इन्दुमति से पूछा ।

"मैंने यह जान लिया है, कि युवरानी के मन में फिलहाल किसी राजकुमार के साथ विवाह करने की इच्छा नहीं है ।" इन्दुमती ने कहा ।

"मुझे मालूम है कि हमारी राजकुमारी महेन्द्रपुरी तथा विक्रमपुरी के युवराजाओं के साथ खूब स्नेहभाव रखती है । यह बात तो तुम भी जानती हो न बेटी? हमारे अतिथि को
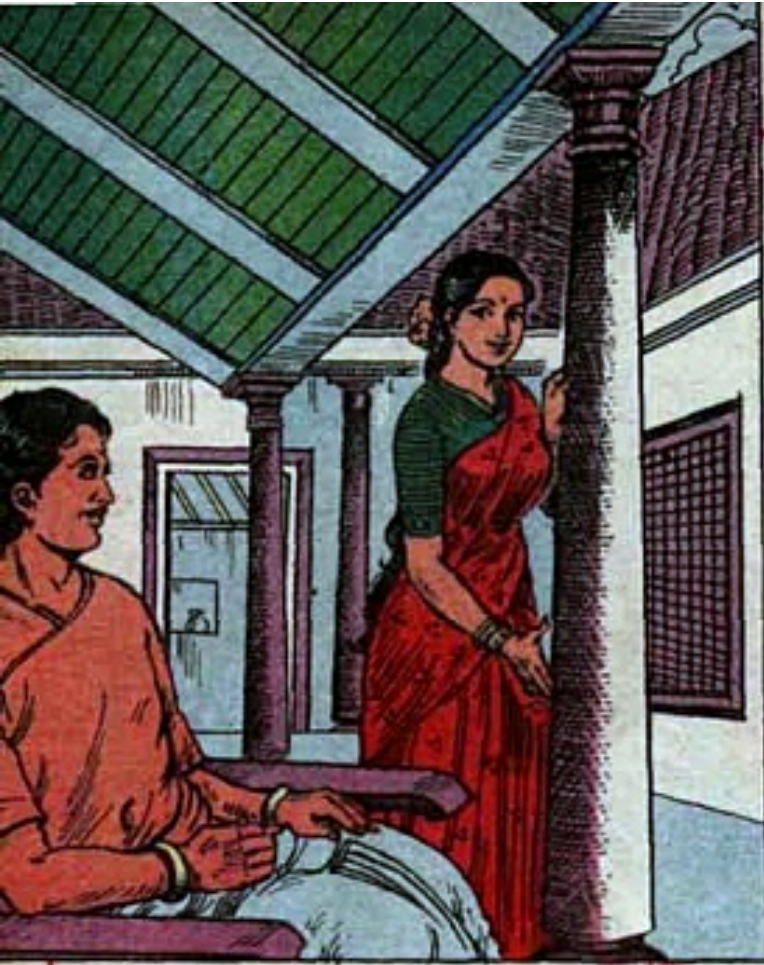
इस बात का भी पता कराना चाहिये ।" इन्दुमती के पिता ने कहा ।

"पिताजी, सच्ची बात मैं अवश्य बता दूँगी ।" इन्दुमती ने कहा ।

सराय का मालिक भीतर ही भीतर खुश हुआ ।

इन्दुमती ने जयशील के पास जाकर कहा, "हमारी युवारानी ने अभी तक किसी के साथ विवाह करने का संकल्प नहीं किया है । आप अपने मित्र को बता सकते हैं, कि वे इन्दुमती के साथ विवाह का प्रस्ताव कर सकते हैं । वैजयंतीदेवी गुणवती हैं और रूप-लावण्यवती भी है ।"

"तुम्हारी सहायता के लिये मैं कृतज्ञ हूँ । पर युवराज ने किसी और युवती के साथ विवाह करने का निश्चय कर लिया है ।" जयशील ने कहा ।

"किस के साथ?" इन्दुमती ने विस्मय में आकर पूछा ।

"इन्दुमती के साथ ।" युवराज ने जवाब दिया ।

इन्दुमती ने लज्जित हो अपना सिर झुका लिया । जयशील ने अपना परिचय देकर इन्दुमती को बताया, कि यदि उसके पिता स्वीकृति दें तो वह इन्दुमती के साथ विवाह करना चाहता है ।

इसके बाद एक शुभ मुहूर्त में दोनों का विवाह वैभवपूर्वक संपन्न हुआ ।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजन्, युवराज जयशील युवरानी के साथ विवाह करने का संकल्प लेकर गया और अन्त में उसने युवरानी की सखी-इन्दुमती के साथ विवाह किया । क्या यह विडम्बना नहीं है? इन्दुमती ने जयशील से प्यार किया, जब उसे यह मालूम नहीं था कि वह एक युवराज है । पर जब उसे पता चला, कि जयशील युवराज है तब उसके साथ विवाह करने की इच्छा जागृत होना सहज ही था—फिर भी उसने अपने पिता की सलाह का पालन क्यों नहीं किया? जयशील को उसने यह क्यों नहीं बताया कि वैजयंती और दो राजकुमारों के साथ खूब प्रेम भाव रखती है? मन में इन्दुमती के साथ विवाह करने का संकल्प रखते हुए भी जयशील ने युवरानी की इच्छा जानने के लिये इन्दुमती

को उसके पास क्यों भेजा? इस प्रश्न का उत्तर जानकर भी न दोगे, तो तुम्हारा मस्तक फूटकर टुकड़े टुकड़े हो जाएगा ।"

इसपर विक्रमार्क ने उत्तर दिया, "जयशील का इन्दुमती के साथ विवाह करना कोई विडम्बना नहीं है । उसके पिता ने उस को समझाया था कि एक गुणवती तथा दयाशील युवती के साथ वह विवाह करे, भले वह किसी देश की राजकुमारी न भी हो । ये सारे उत्तम गुण इन्दुमती में विद्यमान हैं, वह अच्छे स्वभाव की है ।उसे जब मालूम हुआ कि यह अतिथि ही युवराज जयशील है, तब उसने यही विचार किया कि, जयशील का एक युवरानी के साथ विवाह करना उचित ही है । हो सकता है कि युवरानी वैजयंतीदेवी दो युवकों के साथ स्नेह रखती हो, मगर इस कारण मात्र से यह सिद्ध नहीं होता कि वह उनमें से किसी के साथ विवाह करने की इच्छा रखती है । सखी इन्दुमती यह भली भाँति जानती है कि युवरानी ने किसी से भी विवाह करने का अभी तक निश्चय नहीं किया है । वह चाहती तो पिता की कहीं बातें उसे कहकर राजकुमारी के प्रति उसके मन में विमुखता पैदा कर सकती थी और अपना विवाह उसके साथ होने का मार्ग प्रशस्त कर सकती थी । मगर ऐसा करना युवरानी के साथ धोखा बन सकता था । इन्दुमती अत्यन्त ईमानदार है, अतः ऐसा काम वह कभी नहीं कर सकती । अब रहा अन्तिम प्रश्न! सराय के मालिक को युवराज का परिचय उसकी अनुमति से ही अंगरक्षकों ने कराया होगा । जयशील का अन्दाज़ था कि पिता अपनी पुत्री पर यह रहस्य अवश्य प्रकट करेगा । इन्दुमती की परीक्षा करने के लिये ही उसने इस बात को मौके के रूप में इस्तेमाल किया और इन्दुमती उसमें सफल रही । इसलिये जयशील ने उसके साथ विवाह किया ।"

राजा के इस प्रकार मौन होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य होकर पुनः पेड़ पर जाकर लटकने लगा ।

(कल्पित)

समय-सूचकता

एक गाँव में मध्य-रात्रि के समय सब लोग गहरी नींद सो रहे थे। अचानक चिल्लाहट सुनाई दी– "चोर! चोर!!"

सोनेवाले चौंक कर उठ गये और लाठियों तथा छुरियों को लेकर गलियों में आ गये। वहाँ उनको सोमदास नाम का एक युवक दिखाई दिया।

लोगों ने सोमनाथ से पूछा– "कहाँ है चोर?"

सोमनाथ ने पासवाले एक बरगद की ओर इशारा किया। सब लोग दौड़े दौड़े बरगद के इर्द-गिर्द जमा हो गये। चाँद की रोशनी में पेड़ पर कोई चोर उन्हें दिखाई नहीं दिया। हाँ, उन्होंने एक चीता ज़रूर देखा।

चीते को देखते ही भीड़ में से कुछ लोगों ने कहा– "इधर कुछ दिन पहले शाम के समय दो आदमी गाँव लौट रहे थे। इसी चीते ने दोनों में से एक को मार डाला, और दूसरे को घायल कर दिया। अब इसे छोड़ना ठीक नहीं होगा।"

बस, सब लोगों ने चीते पर पत्थर बरसाये, तब वह पेड़ से नीचे कूद पड़ा। सब ने उस पर लाठियों से और छुरियों से प्रहार किये। बेचारा मर गया।

इस घटना के बाद लोगों ने सोमदास से पूछा– "सोमू, एक खूँखार चीता गाँव में घुस गया और तुम 'चोर, चोर' कह कर क्यों चिल्ला उठे?"

सोमनाथ ने मुस्कुराते हुए कहा– 'चोर! चोर!' चिल्लाने पर आप सब लोग लाठियाँ और छुरियाँ लेकर दौड़ आये, अगर मैं 'चीता! चीता!' चिल्लाता तो आप लोग घर छोड़ कर बाहर निकलते? सब लोग अपने घरों के किवाड़ बन्द करके अन्दर ही बैठे न रह जाते?"

सब लोगों ने सोमलाथ की समय-सूचकता की बड़ी तारीफ़ की।

चंदामामा पुरवणी-१०

ज्ञान का ख़ज़ाना

इस महीने का ऐतिहासिक व्यक्तित्व

जहाँगीर

सम्राट अकबर के सब से बड़े लडके सलीम मिर्झा का जन्म ३० अगस्त १५६९ को हुआ। वही आगे चलकर जहाँगीर नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसकी माँ राजपूत थी। सन १६०१ में उसने अपने पिता के खिलाफ़ बग़ावत की। पर महामना पिता ने उसे माफ़ कर दिया। फिर भी जब उसके पुत्र खुशरु ने बग़ावत की तब उसने उसे कैद किया और जेल में बन्द किया। सन १६२२ में वहीं उसकी मौत हुई। जहाँगीर के शासन-काल में ब्रिटिश सम्राट के प्रतिनिधि कैप्टन हॉकिन्स और सर थॉमस रो मुग़ल दरबार में आये थे, जिससे ब्रिटन का भारत के साथ व्यापार करने का मार्ग सुकर हो गया। जहाँगीर बड़ा कला-प्रेमी था। धर्म के मामलों में वह सहिष्णु था। उसके बेटे शाहजहाँ ने कुछ समय के लिए उसके खिलाफ़ विद्रोह किया। उसके बाद उसके सेनापति महाबत खान ने भी उसके खिलाफ़ बग़ावत की, यहाँ तक कि उसने सम्राट को कुछ समय के लिए बंदी बनाया। लेकिन जहाँगीर की होशियार रानी नूरजहाँ ने उसे मुक्त कराया। सन १६२६ में जहाँगीर की मौत हुई।

वह कौन ?

एक ब्राह्मण और एक राजकुमार एक ही गुरु के पास अध्ययन करते थे। ज्ञान की विविध शाखाओं के पाठ वे पढ़ रहे थे। दोनों अच्छे दोस्त बन गये। एक दिन राजकुमार ने ब्राह्मण युवक से कहा—"जब मैं राजा बन जाऊँगा, तब तुम्हें किसी बात की कमी न होगी। चाहो तो मैं तुम्हें अपना आधा राज्य भी दे दूँगा।" अध्ययन समाप्त होने पर दोनों दोस्त बिछुड़ गये। यों कई वर्ष बीते। बेचारे दरिद्र ब्राह्मण को अपने परिवार का पालन-पोषण करना मुश्किल हुआ। बचपन के अपने साथी का आश्वासन उसे याद आया। अब वह राजा बन गया था। वह उसके पास गया और उसको उद्देश्य करके संबोधन किया—'मित्र'! राजा ने यह कह कर कि एक राजा और एक भिखारी कैसे मित्र हो सकते है, उसकी भर्त्सना की।

ब्राह्मण का अपमान हुआ। उसने भी आगे चलकर राजा को अपमानित किया। राजा ने अपनी बारी से ब्राह्मण पर प्रतिशोध लिया।

(अ) यह ब्राह्मण कौन? और

(ब) यह राजा कौन?

(पृष्ठ ४ देखिये)

भारतः तब और आज

उत्तर में हिमालय पर्वत और दक्षिण में कन्याकुमारी, पूरब और पशिचम में दो उपसागरों के बीच स्थित भारत एक विशाल भौगोलिक उप-खंड है ।

भारत कितना प्राचीन है? कह सकते हैं जितनी पृथ्वी प्राचीन है, उतना! पर यह ठीक उत्तर नहीं है । इस अर्थ में भारत एक सभ्यता है, एक संस्कृति है । हम कह सकते हैं कि भारतीय सभ्यता की प्राचीनता हमें मालूम नहीं । कुछ लोग कहते हैं कि वह ईसा पूर्व ५००० वर्ष पुरानी है । औरों के अनुसार वह इससे भी प्राचीन है—प्राचीनतर, प्राचीनतम!

पर एक बात निश्चित है कि भारत का एक साहित्य है, उसकी कुछ दर्शन-प्रणालियाँ हैं, जो इतनी पुरातन हैं कि अन्य कोई सभ्यता ऐसी वैभवसंपन्न परंपरा का दावा नहीं कर सकती । संसार के ज्ञान के प्रथम ग्रंथ-वेद, संसार के पहले दो महान् महाकाव्य— रामायण और महाभारत, संसार का कथाओं का प्रथम संग्रह कथासरित्सागर, संसार की दंतकथाओं की प्रथम पुस्तक—पंचतंत्र, संसार की पहली नीतिकथाएँ-जातक, सब का निर्माण भारत में हुआ । महान् तत्त्वज्ञान या दर्शनों का विकास यहीं हुआ ।

भारत वर्ष

भारत का मूल नाम भारत वर्ष था, जो पुराणोक्त राजा भरत के नाम पर पड़ा। संभवत: भरत यहाँ के सभी राज्यों को एक केन्द्रीय सत्ता के अंतर्गत लाया था। काफी अर्से बाद पर्शियन लोगों ने सिंधु नदी के नाम पर इसे हिन्द कहा। हिन्द से इंडिया शब्द बना। भारत के साथ व्यापार करनेवाले प्राचीन पर्शियन और ग्रीक लोगों के लिए हिन्द का मतलब था इंडियन; उसका धर्म से कोई मतलब नहीं था।

प्राचीन भारत में कई राज्य थे, फिर भी वह एक देश था, क्यों कि सभी राज्यों की साहित्यिक और सांस्कृतिक परंपरा एक थी।

दुर्दैव से सन १९४७ में भारत का कुछ हिस्सा एक अलग देश बन गया—पाकिस्तान। यह नया देश फिर दो हिस्सों में बँट गया और बंगला देश का निर्माण हुआ।

ऐसा लगता है कि नातिदूर भूतकाल में आज का अफगाणिस्तान भी भारत-वर्ष का एक हिस्सा था। श्रीलंका, मलाया, कंबोडिया, इंडोनेशिया, चीन—सभी भारतीय संस्कृति से प्रभावित हैं। भारत का सांस्कृतिक नक्शा भौगोलिक नक्शे से काफी विस्तृत था।

१. पश्चिमी दुनिया को चीन के बारे में विस्तृत विवरण सब से पहले किसने दिया?

२. वह लेखक कौन जिसने गणित पर सुप्रसिद्ध पुस्तक लिखी, पर उसे नोबेल पुरस्कार मिला उसके साहित्य के लिए?

३. कछुआ सिर पर पड़ने के कारण जिसकी मौत हुई वह महान् नाटककार कौन?

४. एक मशहूर उपन्यास की कथा लेखक को अपने एक सपने से मिली । वह लेखक कौन और वह उपन्यास कौनसा है?

५. वाल्मीकि और व्यास की पंक्ति में बैठनेवाला पश्चिमी दुनिया का महान् कवि कौन है?

६. उसके ग्रंथों के नाम क्या हैं?

७. वह शहर कौनसा है, जिसको उसने अमर बनाया?

८. उसके पहले ग्रंथ की नायिका कौन है?

९. उसके दूसरे ग्रंथ का नायक कौन है?

१०. इस लेखक का जीवन-काल कौनसा है और वह कहाँ रहा?

उत्तर

वह कौन?

(अ) द्रोण

(ब) राजा द्रुपद

साहित्य

१. मार्को पोलो ।

२. बर्ट्रांड रसेल । उसकी मशहूर गणित की पुस्तक है प्रिन्सिपिआ मॅथेमॅटिका ।

३. ग्रीक नाटककार एस्चिलस । उडते गरुड के पंजे में से कछुआ उसके सिर पर गिर पड़ा ।

४. रॉबर्ट लुइस स्टीव्हनसन । डॉ. जेकिल अॅंड मि. हाइड ।

५. होमर ।

६. ईलियड और ओडिसी ।

७. ट्रॉय ।

८. हेलन ।

९. युलिसिस ।

१०. ग्रीस में, संभवतः ईसा पूर्व नवीं शताब्दी में ।

नेहरू की कहानी - ७

आखिर जवाहरलाल नाभा सरकार द्वारा मुक्त किये गये । उसी समय टाइफाइड के ज्वर ने उन्हें घेर लिया । एकांत में काट पर कुछ दिन शांतिपूर्वक बिताये । यह उनके लिए एक नया अनुभव था ।

१९२३ में कांग्रेस का अधिवेशन काकिनाड़ा में संपन्न हुआ । उसकी अध्यक्षता मुस्लिम राष्ट्रीय नेता मुहम्मद अली ज़िन्ना ने की । उनके अनुरोध पर जवाहरलाल कांग्रेस महासभा के सचिव बने ।

इस घटना के बाद जवाहरलाल को एक नया अनुभव प्राप्त हुआ । इलाहाबाद के पास गंगा, यमुना और सरस्वती का त्रिवेणी-संगम होता है । वहाँ पर परंपरा से एक बहुत बड़ा मेला लगता है । यह कुंभ मेला बड़े ठाठ से मनाने का रिवाज़ था ।

परंतु उस समय की सरकार ने त्रिवेणी-संगम में स्नान करना अहितकर घोषित किया और उसमें स्नान करने पर रोक लगा दी। बड़ी कड़ाई के साथ पुलिस बन्दोबस्त का प्रबंध किया गया। लोग-बाग नदी में न उतरें इस लिए किनारे पर एक ऊँची बाड़ी लगा दी गई।

उस समय के प्रसिध्द नेता पं. मदन मोहन मालवीय ने सरकार की इस नीति का कठोर विरोध किया। रेत पर बाड़ी के पास अपने स्वयंसेवकों के साथ उन्होंने सत्याग्रह शुरू किया। मेला देखने गये हुए जवाहरलाल ने भी इस सत्याग्रह में हिस्सा लिया।

कई घंटे बीते। दोपहर की कड़ी धूप में रेत तपने लगी। दोपहर के बाद जवाहरलाल अपनी सहनशीलता खो बैठे और बाड़ी पर चढ़कर तिरंगे ध्वज के साथ बैठ गये।

यह देख सैकड़ों स्वयंसेवकों ने उनका अनुकरण किया। बाड़ी टूट गई और लोग नदी में कूद पड़े। आखिर पं. मालवीयजी भी पानी में उतर पड़े।

अहमदाबाद में संपन्न कॉंग्रेस के अधिवेशन में गांधीजी ने यह प्रस्ताव रखा कि उन्हीं लोगों को कॉंग्रेस का सदस्य बनाया जाए, जो सूत कात सकते हैं। पं. मोतीलाल नेहरू, बाबू चित्तरंजन दास आदि ने इस प्रस्ताव का विरोध किया, और उस अधिवेशन का बहिष्कार किया। तब गांधीजी ने इस प्रस्ताव को वापस ले लिया।

सन १९२४ में बेलगाँव में गांधीजी की अध्यक्षता में कॉंग्रेस का अधिवेशन संपन्न हुआ। उनकी इच्छानुसार जवाहरलालजी पुनः कांग्रेस के सचिव बने। गांधीजी ने पूरी तरह समझ लिया कि सभी कॉंग्रेसवालों को जवाहरलाल के प्रति पूरा विश्वास है।

सन १९२५ के ग्रीष्मकाल में मोतीलाल नेहरू अस्वस्थ हो गये। वे परिवार सहित हिमालय के एक स्वास्थ्यकर स्थान पर गये। अपने पिता के साथ जवाहरलाल भी वहाँ गये। वे लोग जब चांबा में थे, तभी उनको समाचार मिला कि बाबू चित्तरंजन दास का देहान्त हो गया है। पिता-पुत्र दोनों कलकत्ता के लिए चल पड़े।

१९२४ में इलाहाबाद में सांप्रदायिक झगड़े शुरू हुए। इस पर जवाहरलाल को बड़ा दुख हुआ। हिंदुओं के द्वारा मंदिरों के सामने जुलूस निकालना मुसलमानों को पसंद न था। और मंदिर के सामने जुलूस निकालना हिंदू धर्मियों का एक प्रमुख कार्यक्रम था।

हिन्दुओं ने इसके ख़िलाफ़ अपनी नाराज़गी बताने के लिए अत्यन्त प्राचीन रामलीला के खेलों को बन्द कर दिया। जवाहरलालजी को वे रामलीला-उत्सव याद आए जिनमें वे बचपन में खूब हौसले से शामिल हुआ करते थे। यह मालूम कर उनको बहुत दुख हुआ कि दोनों धर्मावलंबियों के बीच सहिष्णुता के अभाव में ही इस प्रकार के झगड़े होते हैं।

(क्रमशः)
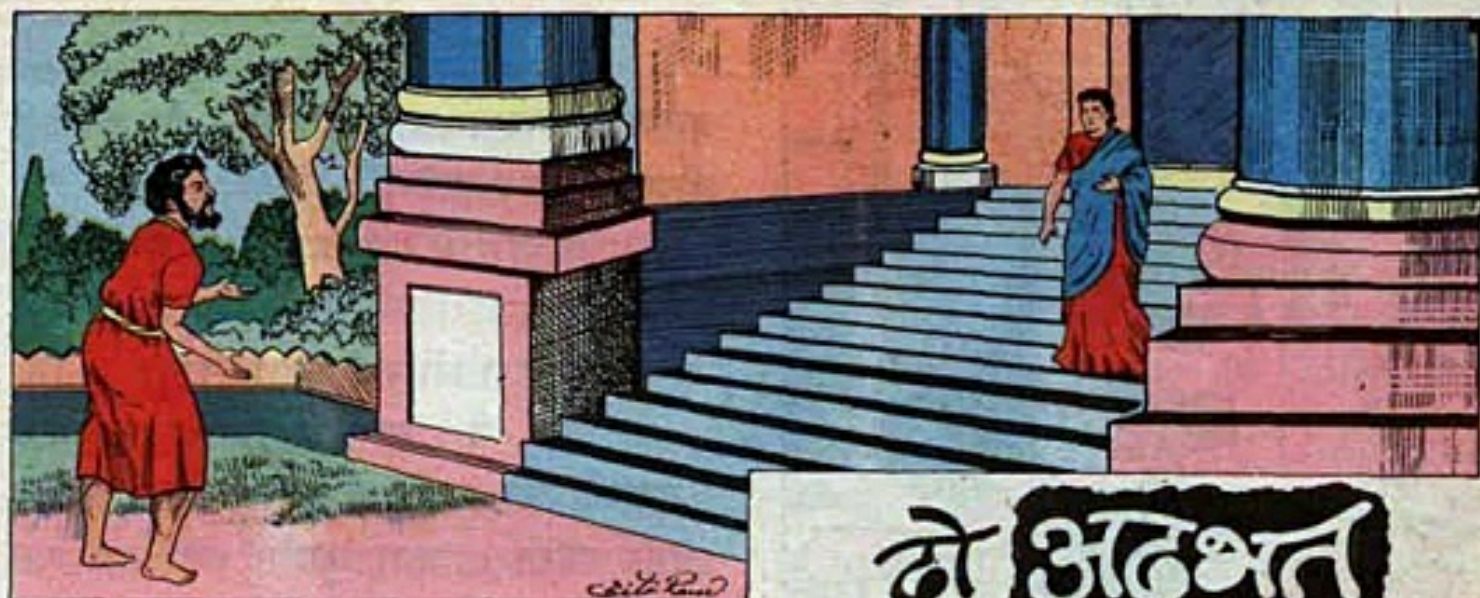
दो अद्भुत

ग्रीस के एथेन्स नगर के पास में एक धनी आदमी रहा करता था। वह गरीबों के प्रति अपार दया दिखाता था। समय के बीतते वह एक धर्मात्मा के रूप में मशहूर हुआ। उस पूरे शहर में उसका-सा दानी और कोई न था। इस लिए जरूरत के समय ग़रीब लोग बराबर उसके पास जाया करते थे।

पड़ोस गाँव के एक आलसी आदमी ने इस अमीर की परोपकारी वृत्ति के बारे में सुना। किसी प्रकार उस धर्मात्मा से फायदा उठाने की एक योजना उसने अपने मन में बना ली। वह दरअसल काम नहीं करना चाहता था। बिना मेहनत किये मुफ़्त में जो मिले वही उसे अधिक प्रिय था।

एक दिन सबेरे आलसी ने अपने पैर में कड़ी गोंद चिपका ली और लँगड़ाते हुए जाकर अमीर की हवेली के सामने बैठ गया। धनी आदमी को घर से बाहर निकलते देख आलसी अत्यंत पीड़ा के साथ कराहते हुए उठ खड़ा हुआ।

अमीर ने बड़े प्यार से पूछा—"क्या हुआ? यों क्यों कराहते हो?" आलसी चुप रहा। थोड़ा सूजनवाला पैर दिखाते हुए आँसू बहाने लगा।

अमीर ने अपने नौकर को बुलाकर आदेश दिया—"इस अतिथि को घर के अन्दर ले जाओ और उसको खाट पर लिटाओ।" फिर आलसी की ओर मुखातिब हो कहा—"तुम चिंता मत करो, तुम्हारी पीड़ा दूर करनेकी ज़िम्मेदारी हमारी रही! मैं वैद्य को बुला लाता हूँ। ठीक दवादारु हो जाएगी तो चन्द दिनों में तुम भले चंगे हो जाओगे।"

आलसी व्यक्ति ने धीरे से नौकर का हाथ पकड़ा और भीतर पहुँच कर खाट पर बैठ गया।

अब अमीर ने नौकर से कहा—"जाओ, किसी वैद्य को फौरन बुला लाओ।" इधर

श्यामा गर्ग

एक हफ़्ते पहले अपने को वैद्य बताता हुआ एक व्यक्ति अपने एक शिष्य के साथ अमीर के भवन के पड़ोसवाले घर में आकर बसा था । सेवक उस वैद्य तथा उसके शिष्य को बुला लाया । वैद्य ने प्रवेश कर अनेक प्रकार से रोगी की जाँच की । उसने समझ लिया कि रोगी निरोग है, और जान-बूझकर अस्वस्थ होने का बहाना बना रहा है । लेकिन उसने यह बात प्रकट नहीं की, बल्कि अपने शिष्य से कहा–''यह रोग आसानी से हटनेवाला नहीं है । इस पर शल्य-चिकित्सा ही करनी पड़ेगी । दूसरा कोई उपाय दिखाई नहीं देता । ऐसी बीमारियाँ समूल काटने से ही ठीक हो जाती हैं । बाहरी मरहम-पट्टी बेकार साबित होगी । आओ, हम इसकी शल्य-चिकित्सा आज ही करें । देर करने से बीमारी बढ़ सकती है ।''

वैद्य के हाथ में एक बड़ी छुरी थमाते हुए शिष्य ने कहा–''हाँ, अब इसके सिवा कोई चारा नहीं है । लीजिए यह छुरी!''

आलसी ने मारे डर के कहा–''वैद्यजी,मेरी व्याधि वैसे भयंकर नहीं है । जाती रहेगी । आप कृपया यह कर्म मत कीजिए, आपको बड़ा पुण्य मिलेगा ।''

मुस्कुराते हुए वैद्य ने कहा–''ओह, यह बात है? वैसे यह बात सच है कि तुम्हारी बीमारी भयंकर नहीं है । पर हम यह बात भी जानते हैं कि धर्मात्मा बने इस धनवान को धोखा देने की तुम्हारी प्रवृति बड़ी भयंकर है!''

आलसी ने गिड़गिड़ाकर कहा–''वैद्यजी, मुझे माफ कर दीजिएगा ।''

''यह बात है तो हम दोनों आपस में समझौता कर लेंगे । अमीर के घर सब प्रकार के सुख भोगने की इच्छा तुम्हारे मन में है । हम इस इच्छा की पूर्ति करेंगे । हम धनी को बता देंगे कि तुम्हें औषध के सेवन के साथ पौष्टिक भोजन भी मिलना चाहिए । अपनी सलाह के लिए हम उनसे धन लेंगे । तुम्हें हम को सहयोग देना पड़ेगा । ठीक है?'' वैद्य ने अपनी शर्त रखी ।

धूर्त आलसी ने झट कह दिया–''वाह, यह तो बहुत ही बढ़िया उपाय है!''

वैद्य ने अमीर के पास जाकर कहा–''यह आदमी एक भयंकर व्याधि से पीड़ित है ।

इसको स्वस्थ बनाने के लिए हम अपनी ओर से पूरी कोशिश करेंगे । पर हम जो औषधि उसे सेवन करने के लिए देंगे, इसके साथ पौष्टिक खुराक देने का प्रबंध आप कीजिएगा ।" इस निवेदन के साथ वैद्य ने अपना शुल्क वसूल किया और प्रसन्नता के साथ घर चल दिया ।

वैद्य की सूचना के अनुसार अमीर ने आलसी के लिए तीन जून बढ़िया भोजन तथा विश्राम का यथोचित प्रबंध किया । वैद्य हर रोज़ आकर आलसी की जाँच करता और धनी आदमी से अपना शुल्क वसूल कर चला जाता ।

यों कुछ दिन बीत गये । एक दिन अमीर ने वैद्य से पूछा—"अब इसका इलाज और कितने दिन चलेगा? इसकी व्याधि में कुछ सुधार हो रहा है कि नहीं?"

वैद्य ने उत्तर दिया—"हम बड़ी सावधानी से इसका इलाज तो कर रहे हैं, पर व्याधि टस-से-मस होनेको तैयार नहीं है!"

दूसरे दिन शाम को हर रोज़ की तरह वैद्य रोगी की जाँच करने आया, तब अमीर ने वैद्य से पूछा—"यह इलाज अब और कितने दिन चलेगा? अब आप अपने इलाज का तरीका बदल दीजिए । वरना मैं रोगी को नगर के वैद्य के पास भेज दूँगा! समझे?" इतना कह कर धनवान आदमी चला गया ।

अब घबराकर वैद्य सोचने लगा—"इस रोगी को अगर नगर के वैद्य के पास ले जाएँगे तो अपनी पोल खुल जाएगी । पैर पर दाग तक लगे बिना व्याधि दूर हो गई है, यह कहे तो कोई विश्वास न करेगा ।"
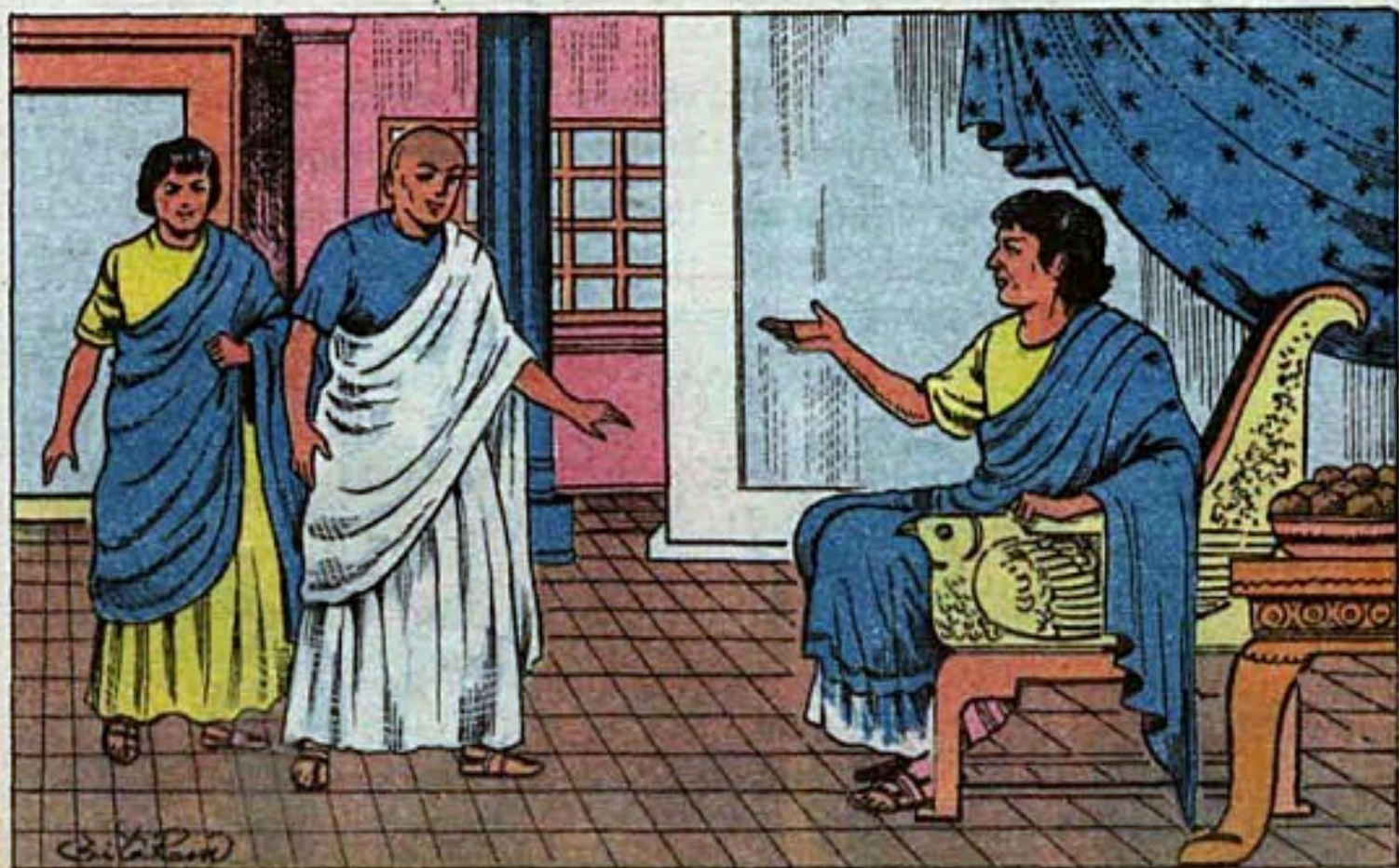
शिष्य ने कहा–"नगर वैद्य जब इसकी जाँच करेगा तो यह स्पष्ट हो जाएगा कि इसे कोई बीमारी नहीं है । इस लिए अब इसका एक पैर काटना ही उचित होगा ।"

"वाह, यह तो बहुत बढ़िया सलाह है । रोगी को बेहोशी की दवा देकर यह काम अभी कर देंगे । जाओ, तुम अभी जाकर पहले बेहोशी की दवा ले आओ ।" वैद्य ने अपने शिष्य को आदेश दिया ।

आड़ में रह कर रोगी ने यह बातचीत सुनी, तब उसका कलेजा काँप उठा । जब शिष्य बेहोशी की दवा लाने गया, तब मौका पाकर आलसी खाट से कूद पड़ा और भाग गया ।

भागते आलसी को देखकर अमीर ने सोचा कि कोई चोर भागा जा रहा है । तब उसने उसका पीछा किया और उसको पकड़ कर पूछा–"यह सब क्या तमाशा है? तुम्हारे पैर की पीड़ा कैसी है?"

"साहब, चुटकी बजाते मेरी व्याधि जाती रही । संभवतः किसी अद्भुत शक्ति के कारण ऐसा हुआ होगा । मैं यह बात वैद्य को सुनाने के लिए ही भाग रहा था ।" कहते हुए आलसी वैद्य के घर की तरफ़ चल पड़ा ।

दूर से ही अपने रोगी का साहस देख वैद्य और उसका शिष्य वहाँ से खिसक गये । उनके पीछे अमीर आदमी भी चला आया था । उसने मन-ही-मन सब समझ लिया और मुस्कुराते हुए कहा–"एक नहीं, दो अद्भुत कार्य संपन्न हुए हैं । केवल तुम्हारा रोग ही नहीं, बल्कि तुम्हारा इलाज करनेवाला वैद्य भी अपने शिष्य के साथ पल भर में ग़ायब हो गया है ।"

अपनी धोखाधड़ी के प्रकट होते देख आलसी ने भी मारे शर्म के अपना सिर झुका लिया ।

उसकी समझ में नहीं आया कि अब कहे तो क्या कहे? अपने किये का उसे बहुत पछतावा हुआ । कुछ देर तक मौन खड़ा हुआ ।

अमीर ने आलसी को माफ़ कर दिया और उसको अपने बगीचे में माली का काम दिया । उसको ईमानदारी के साथ जीवन-यापन का मार्ग दिखा दिया ।

पौण्ड्र वासुदेव द्वारका पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहा था, कि इतने में नारद उसके पास पहुँचा । पौंड्र ने आगे बढ़कर नारद का स्वागत किया । उसकी पाद्य-पूजा कर अर्घ्य चढ़ाए और एक सुवर्णासन पर बिठाकर निवेदन किया—''महाशय, आप तो समस्त लोकों में संचार करते हैं । आप को कहीं कोई रोकता नहीं, आप पर कोई प्रतिबंध नहीं । इस लिए आप मेरी एक मदद कर सकते हैं? सभी लोकों में यह समाचार प्रसारित कीजिए कि मैं कृष्ण और उसके सैनिक बल का सर्वनाश करने जा रहा हूँ । वह गोप बालक मेरे नाम से सर्वत्र प्रसिद्धि पा रहा है । बहुत दिन मैं इसकी उद्दण्डता को देख रहा हूँ । अब मैं इसे बहुत बर्दाश्त नहीं कर सकूँगा । अब की मेरी ताकत को वह देखेगा, तो दंग रह जाएगा ।''

सुन कर नारद ने मुस्कुराते हुए कहा—''यह बात ठीक है कि मैं सारे लोकों में संचार करता हूँ । मेरी बात पर सब लोग विश्वास करते हैं । पर तुम जो करना चाहते हो, उसकी सफलता में मुझे संदेह है । कृष्ण और तुम्हारे बीच समानता ही क्या है? वह पहाड़ है, तो तुम कंकड़! तुम श्रीकृष्ण के साथ कैसे होड़ कर सकोगे? श्रीकृष्ण अवश्य ही तुम्हें दण्ड देगा । इस लिए तुम अपना यह इरादा छोड़ दो । तुम्हारा नाम वासुदेव है और तुम्हारे पास भी शंख, चक्र, गदा आदि आयुध हैं, इस लिए तुम श्रीकृष्ण से बराबरी कभी नहीं कर सकते । तुम्हारे गर्व का हरण करने के लिए श्रीकृष्ण भी उचित समय की प्रतीक्षा कर रहे हैं । श्रीकृष्ण आप होकर

२३. पौंड्र वासुदेव का वध

नारद ने पौंड्र की बातों का जवाब नहीं दिया '। वह सीधे बदरिकाश्रम में पहुँचा और श्रीकृष्ण को पौंड्र की युद्ध की तैयारी का समाचार देकर आगे बढ़ा ।

उसी दिन रात को पौंड्र अपनी प्रचंड सेना के साथ द्वारका को घेरने के लिए चल पड़ा । हज़ारों मशालों के साथ पौंड्र की सेना द्वारका के पूर्वी द्वार पर पहुँच गई । वहाँ पहुँच कर उन लोगों ने भेरी इत्यादि वाद्यों को यों बजाया कि सारी दिशाएँ उस ध्वनि से निनादित हुईं । यादव-गण पहले से ही सावधान थे । रात होते हुए भी मशालों की रोशनी में सारा द्वारका नगर दिन का-सा प्रकाशमान था । पौंड्र के आने से यादव ज़रा भी विचलित न हुए । उन लोगों ने शीघ्र ही अपनी सेनाओं को तैयार किया । इसके बाद उग्रसेन, बलराम, सात्यकी, कृतवर्मा अपनी सेनाओं का संचालन करते हुए निकले और पौंड्र की सेनाओं के साथ भयंकर युद्ध शुरू किया । दोनों पक्षों के हाथी, घोड़े, रथ और सैनिक शीघ्र गति से नष्ट होने लगे ।

एक ओर दोनों दलों के बीच घमासान युद्ध चल रहा था, तो दूसरी ओर पौंड्र के पक्ष के एकलव्य नामक एक योद्धा ने अपना नाम घोषित करते हुए सात्यकी, कृतवर्मा, बलराम तथा श्रीकृष्ण के नाम पुकार कर उनको युद्ध के लिए ललकारा । यादव वीरों ने उसका खूब सामना किया, उसने भी सब पर अनगिनत बाण छोड़े । मशालची मशालें फेंक कर भाग खड़े हुए । सारी युद्ध-भूमि में

तुमसे लड़ने नहीं आएँगे, पर तुमने उनसे युध्द छेड़ा तो तुम हार जाओगे । जीत उन्हींकी होगी । अब तक वे कहीं हारे नहीं हैं ।"

पौण्ड्र ठठाकर हँस उठा और बोला—"आप का प्रतिवाद करूँ तो आप नाराज़ हो जाएँगे । मुझे शाप देंगे ।अतः आप से कुछ कहते डर लगता है । ये ही बातें कोई और कहता तो मैं उसे ज़िंदा न छोड़ता । लगता है, मेरे पराक्रम का अन्दाज़ आप को भी ठीक नहीं है । कृष्ण मेरे सामने है ही क्या चीज़? उसे पराभूत करना मेरे बाएँ हाथ का खेल है । आपके साथ बहस करने के लिए मेरे पास समय नहीं है । वह दिन भी दूर नहीं है, जब आप स्वयं आकर मेरी विजय पर मुझे बधाई देंगे । अब आप जा सकते हैं ।"

अंधकार फैल गया। पौंड्र ने सोचा, उसकी विजय हो गई है। उसने उच्च स्वर में कहा—"दुर्ग की दीवारों पर चढ़ जाओ। ध्वजाओं को तोड़ दो। और नगर पर अधिकार जमा लो।" पौंड्र के नारे सुनकर उस की सेना में उत्साह बढ़ा और वे फिर तैश में आ गये।

यह स्थिति देख सात्यकी का क्रोध भड़क उठा। श्रीकृष्ण ने नगर की सुरक्षा का भार उस पर सौंपा था। उसे यह अपयश प्राप्त होगा कि श्रीकृष्ण की अनुपस्थिति में शत्रु-पक्ष का हौसला बढ़ गया है। यह विचार आते ही उसने अपने दल के योध्दाओं को उत्तेजित करते हुए कहा—"तुम लोग बस देखते रहो मैं किस प्रकार शत्रु को नष्ट कर रहा हूँ। क्या तुम यह बात भूल गये कि नगर की सुरक्षा का उत्तरदायित्व हम सब पर है?"

यों कहते हुए सात्यकी ने आग्नेयास्त्र का प्रयोग किया जिससे दुर्ग के चारों तरफ ज्वालाएँ उठीं। दीवारों पर चढ़ने का प्रयत्न करनेवाले सैनिक युद्ध-भूमि से भाग चले। उनका पीछा करते हुए सात्यकी ने ललकारा—"राजवंश में पैदा होकर राजमर्यादा का उल्लंघन करके आधी रात के समय, जब सब लोग सो रहे हैं, चोर के समान युद्ध करने आया, वह नीच कहाँ है? मैं उसके साथ युद्ध करने आया हूँ?"

यह ललकार सुन कर युद्ध के लिए तैयार पौंड्र आगे बढ़कर आवेश के साथ बोला—"हे सात्यकी, बहुत अच्छा हुआ कि तुम मुझसे लड़ने के लिए आये हो। लेकिन मुझे यह बताओ कि वह कृष्ण कहाँ है? वह कहाँ छिपा
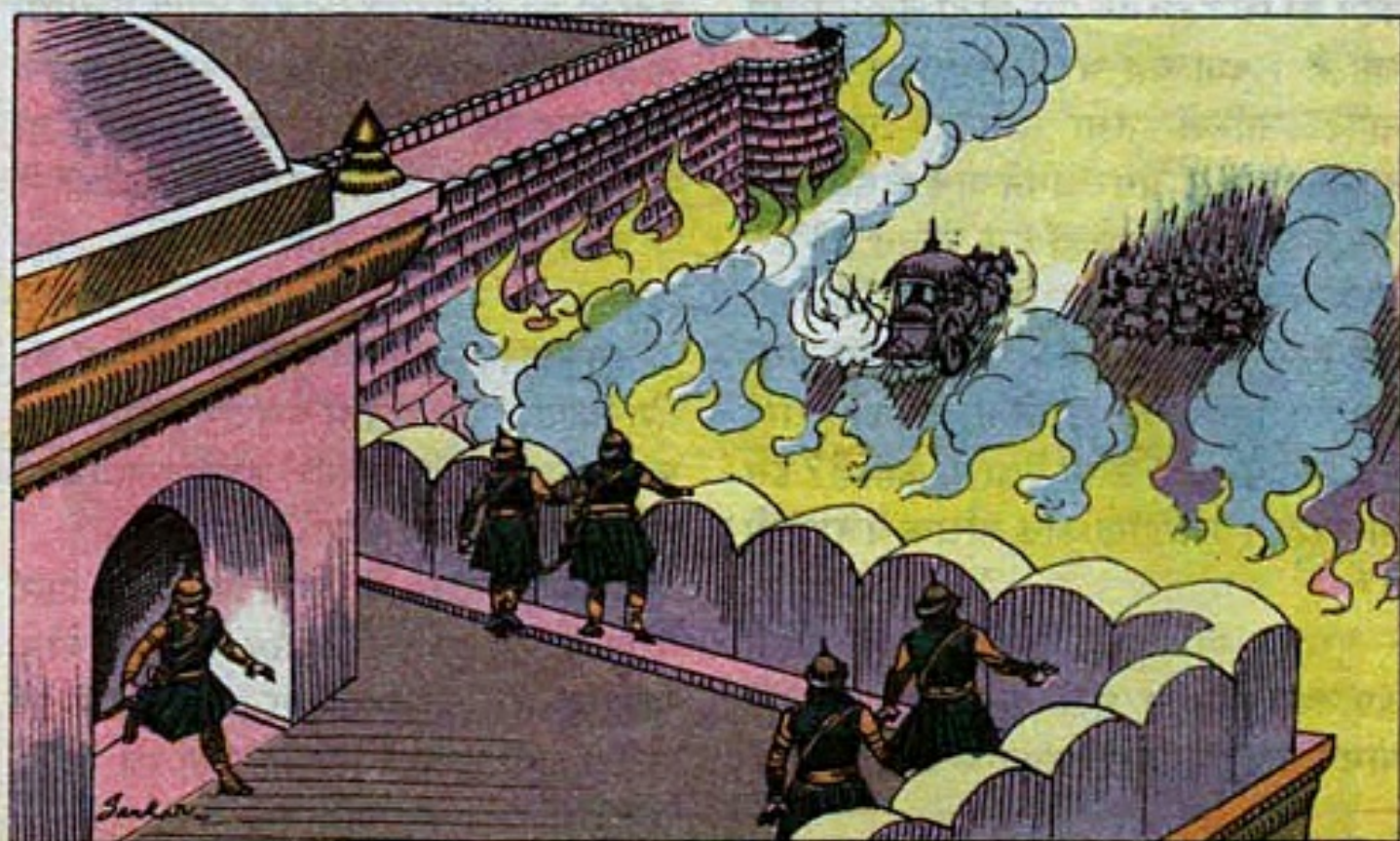
बैठा है? गायों को चराना उसका काम! इस काम को छोड़कर वह एक योद्धा बन कर घूम रहा है । क्या वह मेरे बारेमें कुछ जानता नहीं? नारियों तथा जनवरों का वध करनेवाला कोई अगर अपने नाम के साथ मेरा नाम जोड़ दे तो यह कहाँ तक उचित है? उस कृष्ण ने मेरे मित्र नरक का संहार किया है, इसी लिए मैं इस संग्राम में उसका अंत करने आया हूँ । अब तक उसने बहुतों को हराया है । मेरा पराक्रम उसने देखा ही कहाँ है? इस बार युद्ध में देखेंगे कि कौन अधिक बलशाली है?

तुम्हारे साथ युद्ध करने में मैं अपनी अप्रतिष्ठा मानता हूँ । इस लिए तुम मेरे सामने से हट जाओ, वरना एक क्षण भर में मैं अपने बाणों के प्रहार से तुम्हें परलोक भेज सकता हूँ । बस, तुम देखते ही रहो । इससे तुम्हारे कृष्ण का अहंकार चूर-चूर हो जाएगा । मुझे मालूम है कि यहाँ की सारी ज़िम्मेदारी तुम पर सौंप कर वह कैलाश की यात्रा पर गया है । उसके लौटने पर मैं उसकी खबर ले लूँगा । अभी उसकी प्रसन्नता के लिए अपनी मृत्यु को स्वीकारना ही तुम्हारा धर्म है ।"

थोड़ी देर दोनों में इसी प्रकार प्रलाप होते रहे और अंत में दोनों युद्ध करने लगे । दोनों ने परस्पर बाण चलाकर एक दूसरे को सताया । बारी बारी से दोनों भी बेहोश हुए । दोनों ने एक दूसरे के बाण तोड़ दिये । उन्होंने आपस में गदा-युद्ध एवं मल्ल-युद्ध भी किया । दोनों समान पराक्रमी प्रतीत हुए । दर्शकों को ऐसा लगा कि इस भयंकर संग्राम में दोनों की मृत्यु होगी । यह संभव नहीं कि कोई एक दूसरे का वध करके विजयी हो जाए । आखिर दोनों पक्षों के योद्धाओं ने बीच-बचाव करके दोनों को अलग कर दिया ।

इसके बाद एकलव्य तथा बलराम ने द्वंद्व युद्ध किया । उस युद्ध में बलराम ने एकलव्य को बेहोश कर दिया और अपने हलायुध से शत्रु-सेना को थर्रा दिया ।

इतने में होश में आया एकलव्य फिर बलराम पर टूट पड़ा । उन दोनों के बीच भयानक युद्ध चल रहा था कि पूरब में पौ फटी । पूर्वी क्षितिज पर लालिमा छा गई ।

पौंड्र ने अपनी सेनाओं को युद्ध-विराम का आदेश दिया। उसने कहा – "हम लोग भले ही असंख्य लोगों का संहार करें, पर उससे फ़ायदा ही क्या? हमारा असली शत्रु तो यहाँ पर है नहीं! अत: यह युद्ध निरर्थक है। कृष्ण के आने पर हम अपने शौर्य व पराक्रम का उसे परिचय देंगे। इन क्षुद्र लोगों पर अपने प्रताप को प्रदर्शित करना व्यर्थ है। इस लिए अब इस युद्ध को बन्द करो। उस कृष्ण के लौटने के बाद सच्चा संग्राम तो उसके साथ होगा। इन नाचीजों के साथ लड़कर व्यर्थ ही हमने अपना समय गँवाया है।"

पौंड्र की सेना युद्ध बन्द करके तुरन्त पीछे हटी। पौंड्र अपनी सेना को साथ लिये अपने मित्र काशी-नरेश के पास गया और वहीं कृष्ण के आगमन की प्रतीक्षा करता रहा।

उधर द्वारका में यादवों ने अपनी विजय के उपलक्ष्य में दुंदुभियाँ बजायीं और वे नगर के अंदर चले गये। उन्हें इस बात की बड़ी प्रसन्नता थी कि वे श्रीकृष्ण के आदेश का पालन कर सकें।

इतने में उन्हें आकाश-मार्ग पर स्वयं श्रीकृष्ण दिखाई दिये। गरुड़ के वाहन से वे नगर के बाहर उतर पड़े और दारुक द्वारा लाये गये रथ पर स्वार हो द्वारका के भीतर पहुँच गये। बारह वर्षों बाद श्रीकृष्ण के दर्शन करके सभी यादव अत्यन्त प्रसन्न हुए। श्रीकृष्ण ने अपनी कैलाश यात्रा का वृत्त सब को सुनाया और पौंड्र के युद्ध के समाचार सुने।

श्रीकृष्ण के द्वारका लौट आनेका समाचार पाते ही काशी में रहे पौंड्र ने श्रीकृष्ण के पास

इस प्रकार संदेश भेजा–"गायों के बीच पैदा होनेवाले तुम धर्म की बातें क्या जानोगे? नारियों, जानवरों तथा रिश्तेदारों का वध करने पर भी तुम चुप नहीं रहे, तुमने मेरा नाम तथा चिन्हों को भी धारण कर लिया है । तुम्हारी-मेरी क्या बराबरी हो सकती है? अगर तुम जीवित रहना चाहो, तो मेरी शर्तों के अनुसार चक्र आदि आयुधों को छोड़ दो, अपने नाम के साथ मेरा नाम जोड़ना तत्काल छोड़ दो और मेरी शरण में आओ ।"

दूत के मुँह से पौंड्र का संदेश सुन कर श्रीकृष्ण हंस पड़े और बोले–"मैं तुम्हारे राजा की बातों का पालन अवश्य करूँगा । चक्रआदि आयुध छोड़ने के लिए कहा है, इस लिए मैं उसी पर मेरे चक्र का प्रयोग करूँगा । उसकी शरण में आनेकी प्रार्थना उसने की है, इस लिए मैं उसकी शरण (वध) स्वयं देखूँगा । बड़े व्यक्ति के प्रस्ताव का तिरस्कार करना उचित नहीं है ।" इतना कह कर दूत का समुचित सत्कार करके उसे विदा किया ।

अपने दूत के मुँह से संदेशा सुन कर पौंड्र अपने साथी राजाओं तथा उनकी सेनाओं के साथ काशी नगर के बाहर युद्ध के लिए सन्नद्ध हो श्रीकृष्ण के आगमन की प्रतीक्षा करने लगा ।

श्रीकृष्ण को युद्ध के लिए निकलते देख सात्यकी, उग्रसेन आदि लोग अपनी सेना के साथ चलने को तैयार हुए । पर श्रीकृष्ण ने उनको रोक कर कहा–"युद्ध में तुम लोगों ने एक बार विजय प्राप्त की है । अब मेरी बारी है!"

इसके बाद वे अपने वाहन गरुड़ पर आरूढ हो पौंड्र से मिलने चले । दोनों वासुदेव आमने-सामने खड़े हो गये । श्रीकृष्ण ने पौंड्र से कहा–"पौंड्र राज! यदि तुम मेरे सारे चिन्ह धारण करने की इच्छा रखते हो, तो मुझे से प्रार्थना करते, मैं उसे स्वीकार करता । तुम ने यों मूर्खता क्यों की? अब भी सही, मेरी शरण में आ जाओ, तो मैं तुम्हें क्षमा करूँगा । मैं शरणागत की सुरक्षा करता हूँ । मेरे चक्र के प्रहार से नरकासुर के समान कई दुष्ट अपने प्राण खो बैठे हैं । यहाँ पर जो लोग उपस्थित हैं, उनमें से कोई तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकेगा । मैं तुम्हारा हितैषि हूँ, इस लिए सच्ची बात तुम्हें बता रहा हूँ ।"
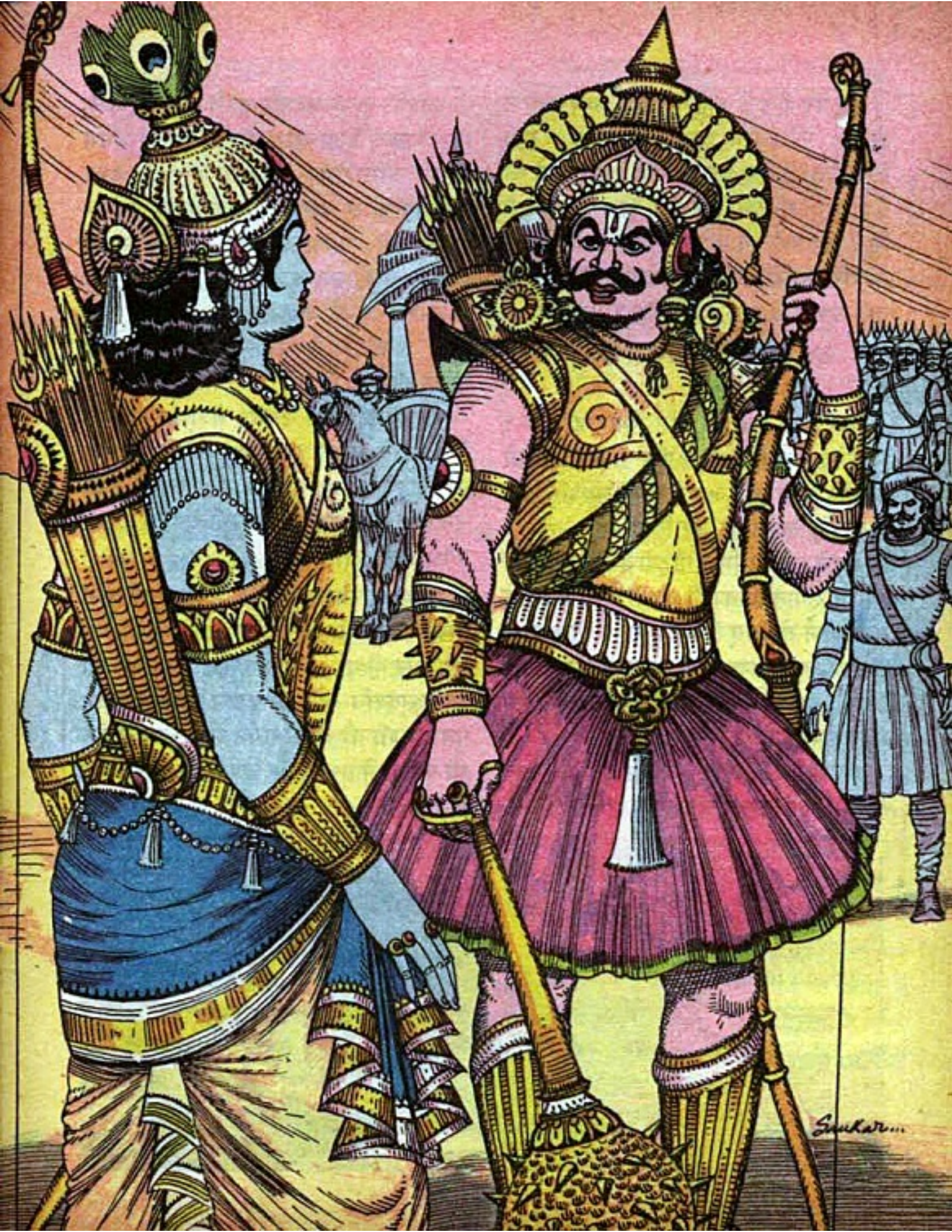
इस पर पौंड्र ने कहा—"वाह, खूब! तुम ने ही खुद मेरे चिन्ह धारण कर लिये । इसी लिए मैं तुम्हें दण्ड देने आया हूँ । मेरे आने का समाचार जानकर तुम कुछ दिन कैलाश में छिप कर रह गये । तुम्हारी अनुपस्थिति में तुम्हारी नगरी को ध्वस्त करना मैंने उचित नहीं समझा । अच्छा हुआ कि तुम आ गये । दखो, अब यमराज तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं ।"

अब दोनों युद्ध के लिए तैयार हो गये । श्रीकृष्ण ने बारी बारी से पौंड्र के सारे आयुधों को तोड़ दिया और अंत में अपने सुदर्शन चक्र द्वारा पौंड्र का संहार कर दिया ।

अपने घनिष्ट मित्र पौंड्रराज की मृत्यु का समाचार पाते ही काशी का राजा श्रीकृष्ण से युद्ध करने के लिए तैयार हुआ । श्रीकृष्ण ने एक ही अस्त्र द्वारा काशी राजा का सिर काट दिया । वह सिर जाकर काशी नगर के मध्य में गिर पड़ा ।

इस प्रकार श्रीकृष्ण अपना उद्दिष्ट कार्य समाप्त कर द्वारका लौट गये ।

काशी-नरेश का पुत्र अपने पिता की मृत्यु पर व्याकुल हुआ और उसने अपने पुरोहित द्वारा अग्निहोत्र करवाया । इस पर दक्षिणाग्नि से कृत्या नामक एक भयंकर पिशाचिनी उत्पन्न 'हुई और उसने पूछा—"मुझे क्या आदेश है?"

काशी-राजा के लड़के ने कहा—"तुम कृष्ण तथा उसके सगे-संबंधियों का वध करके लौट जाओ ।"

आजकल उनके उत्पात बेशुमार बढ़ रहे हैं । देखते-देखते उस कृष्ण ने मेरे पिताजी की जीवन-लीला समाप्त की! इसकी सज़ा उन द्वारकावासियों को मिलनी चाहिए । तुम शीघ्र चली जाओ ।"

कृत्या द्वारका पहुँची । द्वारकावासी उसे देखकर भयभीत हुए और श्रीकृष्ण को यह समाचार दिया । श्रीकृष्ण ने उस पर भी अपने सुदर्शन-चक्र का प्रयोग किया । कृत्या पुनः काशी की ओर भागने लगी, तब चक्रने भी काशी में प्रवेश कर नगरी को ध्वस्त कर दिया ।

असफल युक्ति

एक गाँव में एक अमीर आदमी रहा करता था । चूँकि उसके पास बहुत धन था, वह खूब दान-दक्षिणा देता था । जो भी कोई उसके द्वार पर आता, उसे कुछ-न-कुछ अवश्य मिलता । वह किसी को 'ना' न करता था । अगर वह घर में न होता तब भी पानेवालों को दान-दक्षिणा ज़रूर मिल जाती । एक विख्यात दाता के रूप में उसने सुयश प्राप्त कर लिया ।

पड़ोस के गाँव में एक और धनी रहता था । पर वह बड़ा ही कंजूस था । उसने बहुत-सा धन जमा कर लिया । अपने रिश्तेदारों की अपेक्षा उसे धन से अधिक प्यार था । धन का व्यय करते समय उसको बड़ा दुख होता । कौए को एक दाना तक फेंकते उसकी नानी मरती । अतः लोग जिस मुँह से दाता की प्रंशसा करते उसी मुँह से कंजूस की कड़ी निंदा करते ।

कंजूस ने सोचा कि उसे यों जो अपयश प्राप्त हुआ है, उसे किसी प्रकार मिटाना चाहिए । उसके पास एक ईमानदार नौकर था । कंजूस ने उससे परामर्श करके अपने अपयश को दूर करने की एक योजना बना दी ।

नौकर ने सलाह दी – ''मालिक, लोग आप को महान् दाता कहें यह तो असंभव है । हाँ, दाता के रूप में सुप्रसिद्ध पड़ोस के गाँव के बुज़ुर्ग धनी को आसानी से धोखा दिया जा सकता है । आप एक दिन उनको हमारे घर प्रीति-भोज पर आमंत्रित कीजिए । वे जब हमारे घर में होंगे, तब मैं विभिन्न प्रकार के वेष धारण करके भीख माँगने आऊँगा । आप उनके देखते हर बार मुझे सौ मुद्राएँ दान देते जाइए । इस पर विस्मय के साथ वे आपकी दानशीलता की तारीफ करते जाएँगे । एक कौड़ी खर्च किये बगैर आपको

अनायास अपार यश प्राप्त होगा ।

"वाह, तुम्हारा दिमाग भी बड़ा तेज़ है । उस अमीर दानशूर को दावत पर बुला लेंगे । आज ही शाम को तुम उनके घर जाकर उन्हें प्रीति भोज का निमंत्रण दे आओ । वे आनाकारी करें तो उनको समझाओ । कह देना-आप अवश्य पधारिए ।" कंजूस ने नौकर को समझाकर कहा ।

नौकर पड़ोस के गाँव के अमीर के घर पहुँचा और निवेदन किया—"महाशय, हमारे मालिक ने आप को कल उनके घर दावत पर बुलाया है । आप से प्रार्थना है कि आप अवश्य पधारिए ।"

दानशूर ने कंजूस के नौकर से पूछा—"भाई, हम ने सुना है कि तुम्हारा मालिक बिल्ली तक को चार दाने नहीं देता! कल हम को प्रीति-भोज पर न्यौता है, तो उसके पीछे कैसा रहस्य छिपा है?"

"महाशय, लगता है कि हमारे मालिक के बारे में लोग जो कहते हैं, उस पर आपने विश्वास कर लिया है । मैं आपको हकीकत सुनाता हूँ—वास्तव में हमारे मालिक महान् दानी हैं । साधारण भिखारियों तक को वे सौ मुद्राओं से कम दान नहीं देते । पर वे जो कुछ करते हैं, वह गुप्त दान होता है । तीसरा कोई व्यक्ति उस दान को नहीं जानता । मैं क्या अपने मालिक की बड़ाई करूँ? कल आप खुद ही देख लीजिए । अब कल आप को दावत पर बुलाने का खास उद्देश्य यह है कि अब तक उन्होंने जो दान दिये हैं, उनकी संख्या एक लाख पूरी हो गई है । इस लिए कल मालिक मंदिर में भगवान का अभिषेक करवा रहे हैं । इस उपलक्ष्य में एक सुयोग्य व्यक्ति को दावत खिलाने का उन्होंने निश्चय कर लिया है । दान धर्म में उनकी समता करनेवाले इस इलाके में आप अकेले ही हैं । इस लिए विशेष रूप से कल आपको निमंत्रण दिया गया है ।" नौकर ने सारी बात समझाकर कही ।

दाता ने थोड़ी देर सोचकर कहा—"अच्छी बात है । तुम अपने मालिक से कह दो कि मैं कल सुबह जितनी जल्दी बन सके, वहाँ पहुँच जाऊँगा ।

उनसे कहना— उनका निमंत्रण पाकर मुझे बड़ी खुशी हुई है । अवश्य आऊँगा । प्रतीक्षा करें ।"

नौकर ने घर लौट कर मलिक को सारा वृत्तान्त सुनाया । दूसरे दिन दाता कंजूस के घर पहुँच गया ।

कंजूस ने पूछा—"आप अपने साथ अपने नौकर को क्यों नहीं लाये जी?"

"एक छोटे-से काम के लिए वह पीछे रह गया है । काम पूरा करके फिर वह यहाँ आ जाएगा ।" दाता ने उत्तर दिया ।

कंजूस ने निवेदन किया—"देखिए जी, कल हमारे नौकर ने आप को सब बता ही दिया है । अपने दान का समाचार मैं किसी पर प्रकट नहीं करना चाहता । दान-धर्म करना ही मेरा प्रमुख उद्देश्य है, यश-प्राप्ति करना नहीं । आप से प्रार्थना है कि मेरा यह रहस्य किसी को मालूम न कराएँ ।"

इस बीच कंजूस का नौकर मालिक के पास आकर कह गया—"मालिक, मैं अभी मंदिर जाकर भगवान का अभिषेक करवा कर लौटता हूँ ।" और फिर वह अपने घर चला गया । इस के बाद वह बूढ़े भिखारी का वेष धारण कर अपने मालिक के द्वार पर आया । दाता से बातचीत करनेवाले कंजूस ने अपने पासवाली थैली से सौ मुद्राएँ निकाल कर उसे दान दीं ।

बूढ़े भिखारी के चले जाने के बाद कुछ ही क्षणों में एक बैरागी आ पहुँचा । कंजूस ने उसको भी अपनी थैली में से सौ मुद्राएँ निकालकर दीं ।

इसके बाद भोजन के समय तक एक गूँगा, एक अंधा, एक भक्त, एक यात्री, एक कोढ़ी इस प्रकार दस लोग बारी बारी से आये । कंजूस ने हर एक को सौ-सौ मुद्राएँ दान में

दीं । साथ ही कंजूस ने मन-ही-मन अपने नौकर की तारीफ़ की कि कैसे बड़ी खूबी से वेष बदल-बदल कर वह आ सका । अब दाता ने कंजूस से कहा – "आप जैसे दानशूर को मैंने आज तक कहीं नहीं देखा । और न ऐसे दाता का नाम ही सुना है! लगता है कि आज ही आपने देखते-देखते दस हज़ार मुद्राएँ दान में दे दीं ।"

कंजूस ने कहा – "नहीं जी, इतनी रकम तो होगी नहीं । केवल दस लोग ही तो आए! इतना तो मैं रोज़ ही देता आया हूँ ।"

दुपहर तक कंजूस का नौकर अपने वास्तविक रूप में आ पहुँचा । उसने मालिक से कहा – "सरकार, लक्षय पत्र-पूजा और अभिषेक तो अभी अभी समाप्त हुआ । लीजिए, यह मंदिर से मैं प्रसाद लाया हूँ ।" कहते हुए थाली के साथ वह घर के भीतर चला गया ।

थोड़ी देर बाद कंजूस भी अन्दर चला गया और उसने नौकर से कहा "वाह वाह! तुमने तो बड़ा अच्छा नाटक रचा! लाओ मेरा सारा धन!"

"लीजिए, ये रहीं पाँच सौ मुद्राएँ!" कहते हुए नौकर ने कंजूस के हाथ धन की थाली रख दी ।

"अरे, पाँच सौ कैसे? मैंने तुम्हें एक हज़ार मुद्राएँ जो दी थीं!" घबराकर कंजूस ने कहा ।

"जी नहीं, मैं केवल पाँच बार ही वेष बदल कर आया था । हर बार आप ने सौ-सौ मुद्राएँ दीं ।"नौकर ने जवाब दिया ।

"तो दस आदमी कैसे आये? अगर तुम पाँच बार आये, तो फिर बाकी पाँच बार कौन आया?" व्याकुल हो कंजूस ने पूछा ।

"शायद वह मेरा नौकर होगा!" दाता ने आगे बढ़कर कहा । जब मालिक और नौकर के बीच बातचीत हो रही थी, तब दाता ने चुपके से अन्दर घुस कर उनकी बातचीत सुन ली थी ।

"अब मेरा नौकर भी आ जाएगा । वह विश्वासपात्र है । आपकी पाँच सौ मुद्राएँ वापस करेगा ।"दाता ने कहा ।

कंजूस ने लज्जा से अपना सिर झुका लिया ।

ऋषिपुर में एक आदमी रहा करता था, उसका नाम था नीलांबर। उसके पास दो दुधारु भैंसें थीं। उनका दूध बेचकर वह अपनी गृहस्थी चलाता था। एक साल बरसात के मौसम में उसकी दोनों भैंसें किसी भयानक बीमारी का शिकार हो मर गईं। अब अपनी आजीविका चलाना नीलांबर के लिए दूभर हो गया। कुछ दिन जहाँ भी उधार मिला, लेता गया। धीरे धीरे कर्ज मिलने से रहा, उल्टे लोगों की माँग बढ़ती गई।

एक दिन रात को बच्चे सो रहे थे। नीलांबर अपनी पत्नी के पास जाकर व्याकुल स्वर में बोला–"मैं आज रात को सब की आँख बचाकर शहर जा रहा हूँ। शादी के समय मिली अँगूठी और चूड़ियाँ बेचकर कोई व्यापार शुरू करूँगा।"

नीलांबर की पत्नी कनकवल्ली को बहुत दुख हुआ। आँखों में आँसू भरकर बोली–"देखिए, आपके बिना तो मैं एक क्षण भर भी जीवित नहीं रह सकूँगी। यह आप क्या बेहूदी बात कर रहे हैं?"

"ऐसा मत कहो जी। शहर में अपना स्थायी निवास बनने तक तो तुम लोगों को यहीं रहना पड़ेगा।" नीलांबर ने पत्नी को समझाने की कोशिश की।

"मुझे उम्मीद नहीं है कि व्यापार में लाभ कमाकर आप शहर में हमारा स्थायी निवास बनवा सकेंगे। व्यापार का कुछ भी अनुभव न रखनेवाले आप सब प्रकार से नुकसान उठा बैठे, तो हमारा फिर क्या होगा यह भी सोचिए। आप मत जाइए यही बेहतर है।" कनकवल्ली ने अनुरोध के स्वर में कहा।

"इस प्रकार तुम मुझे कायरता की दवा पिला रही हो?" नीलांबर ने खीझकर प्रश्न किया।

मीरा धिंग्रा

इतने में द्वार को किसी ने खटखटाया ।

"कौन है?" पूछते हुए नीलांबर ने जाकर किवाड़ खोल दिया ।

डयोढ़ी पर हाथ बाँधे खड़ी कुबड़ी डायन को देख नीलांबर मारे डर के काँप उठा ।

डायन ने पूछा—"ज्वर की दवा, खाँसी तथा सिर-दर्द की दवा तो मैं जानती हूँ । क्या कायरता की दवा भी कायरपन को दूर करने के लिए इस्तेमाल की जा सकती है?"

नीलांबर के मुँह से कुछ शब्द निकल नहीं पाये । कनकवल्ली तत्काल वहाँ आ पहुँची और हिम्मत बाँध कर पूछ बैठी—"क्या यह जाननें के लिए आधी रात किसी का द्वार खटखटाया जाता है?"

कुबड़ी डायन ने हाथ जोड़ कर नम्रता से कहा—"माई, तुम्हें बहुत पुण्य लगेगा । जो दवा तुम अपने पति को पिलाना चाहती थी, वह मुझे क्यों न पिला दो । मेरी कायरता दूर होगी! मेरी सारी ज़िंदगी डरते-सहमते बीती जा रही है । मैं श्मशान को छोड़ कर अभी पहली बार गाँव में पहुँच गई हूँ । अन्य डायनें गाँव में आकर तरह तरह से हंगामा मचाती हैं । मैं दीपक को देखती हूँ तो चकराने लगती हूँ । मनुष्य को देखते ही मेरा कलेजा काँप उठता है!"

डायन की कायरता को देख कनकवल्ली ने थोड़ी और हिम्मत बटोर ली । घर के अंदर जाकर चारों तरफ़ ग़ौर से देखा । किसी कोने में थोड़ी इमली पड़ी थी । अजवाइन और नमक तो था ही । इन तीनों को बारीक पीस कर पानी में डाल कर एक घोल बना लिया । फिर एक प्याली में वह घोल डायन को देती

बोली—"लो, पी लो, यही है कायरता की दवा!"

डायन ने आँखें मूँद कर एक दी घूँट में वह दवा पी डाली। फिर अँधेरे में हाथ बढ़ाकर एक थैली मँगवा ली। उसे कनकवल्ली के हाथों में थमाकर बोली—"यह तुम्हारी इलाज की फीस है!"

खन् खन् की ध्वनि करनेवाली उस थैली को हाथ में लेकर कनकवल्ली ने उसका मूल्य आँका। फिर भागनेवाली डायन से कहा—"अरी ठहर जाओ। कल फिर आना, भूलना मत। समझी?"

इसके बाद कनकवल्ली ने डायन को भली भाँति समझाया कि कायरता कैसे एक दुर्गुण है, और साहस व हिम्मत के द्वारा कैसे महान् कार्य सिद्ध किये जा सकते हैं। अगले दिन डायन दवा पीने आई तो कनकवल्ली ने फिर अनेक साहस-कथाएँ उसको सुनायीं और उसका उत्साह बढ़ाया।

अब सवेरा होने को था। डायन काली बिल्ली का रूप धारण कर श्मशान की ओर भाग गई। डायन के जाते ही पति-पत्नि ने दोनों दिन प्राप्त थैलियों को खोल कर देखा। आँखों को चौंधियानेवाली सुवर्ण-मुद्राएँ उन्हें दिखाई दीं। उनको बहुत खुशी हुई और जाकर थैली को अटारी पर छिपा दिया।

अगली रात डायन फिर कनकवल्ली के पास आई और पूछा—"कायरता को दूर करनेवाली दवा आज मुझे नहीं पिलाओगी?"

कनकवल्ली को लगा कि आज डायन का कुबड़ापन कुछ कम हो गया है। उसने पहले से ही दवा तैयार रखी थी, उसे डायन को पिला
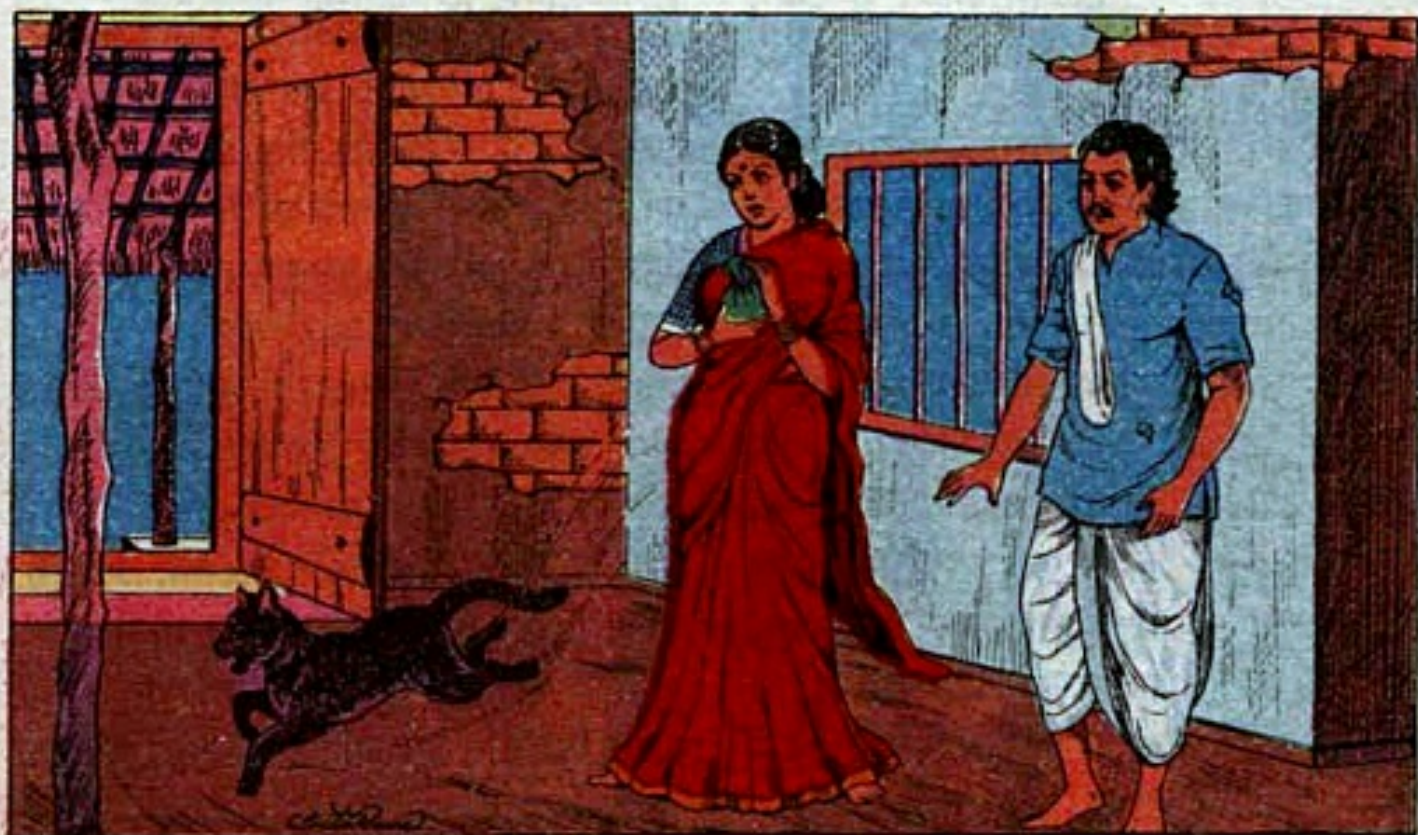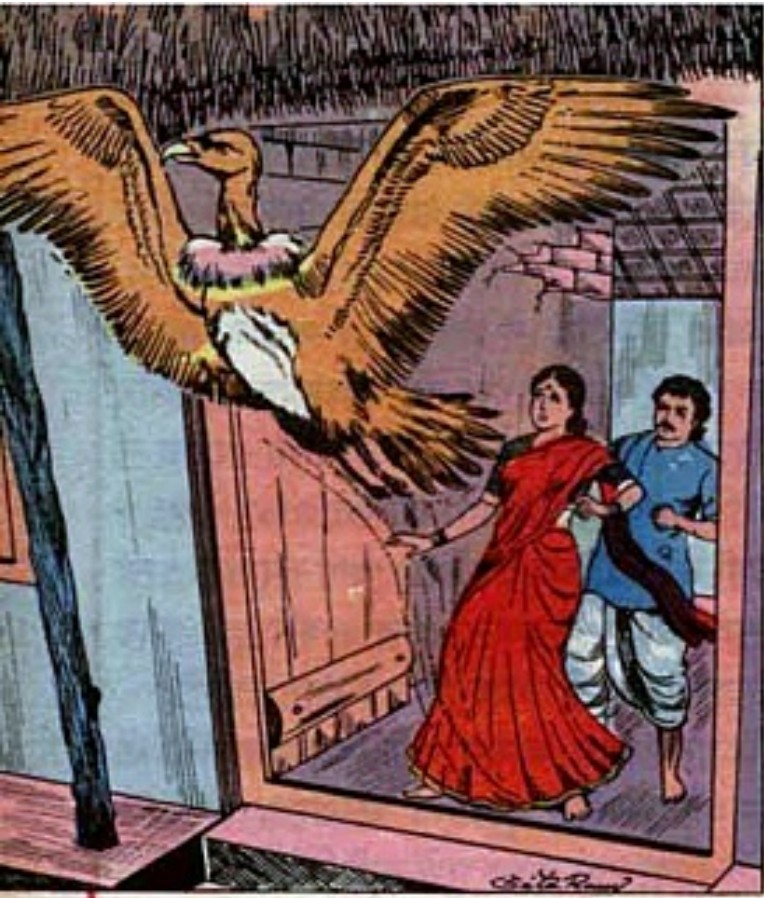
दिया । फिर उसने डायन को कुछ और वीरों की साहस-कथाएँ सुनाईं । उन्हें सुन कर डायन मुग्ध हो गयी और उसने तालियाँ बजाईं ।

डायन ने अंधकार में हाथ फैलाकर धन की और एक थैली मँगवाई और उसे कनकवल्ली के हाथों में धर दिया । वह एक उल्लू के रूप में बदलकर अंधेरे में उड़ गई । पति-पत्नी ने इस बार भी थैली को अटारी पर छिपा दिया ।

नीलांबर ने अब अपनी पत्नि से कहा—"देखो, अगर कल भी यों स्वर्ण-मुद्राओं से भरी एक और थैली मिल जाए, तो अपने सारे कर्ज़ चुकाकर शहर चले जाएँगे । तुम्हारे समान बुद्धिमती पत्नि हो तो व्यापार में नुक़सान हो ही कैसे सकता है?"

तीसरे दिन रात को अत्यन्त कोलाहल के साथ डायन आ पहुँची और उसने झट कायरता की दवा पी डाली । उस दिन उसका कुबड़ापन बिलकुल ग़ायब था ।

कनकवल्ली ने कहा—"देखती हो न? कायरता के कारण ही तुम कुबड़ा बन गई थी । मेरी दवा सेवन करने से अब तुम एकदम अच्छी बन गई हो ।" कनकवल्ली एक कहानी सुनाने को हुई, तो डायन ने कहा—"अरे, ऐसी बेमतलब की कहानियाँ सुनने के लिए अब मेरे पास फुरसत नहीं है । मुझे तो श्मशान में जा कर हंगामा मचाना है । समझी?"

और डायन जाने को तैयार हुई । कनकवल्ली ने उसे रोकते हुए पूछा—"आज तुम फीस देना भूल गई क्या?"

आँखें लाल-पीली करके डायन ने उसे डाँटा—"मुझे रोकनेवाली तुम कौन? तुम्हारी यह हिम्मत?" कहते हुए डायन ने अपनी लंबी जीभ फैला दी और पति-पत्नि ने अटारी पर छिपाई दोनो थैलियों को निगल डाला । फिर गीध के रूप में बदलकर पंख फड़फड़ाती हुई वह श्मशान की ओर चल पड़ी ।

यह सब देख नीलांबर चीख कर बेहोश गया । कनकवल्ली ने उसके चेहरे पर पानी छिड़का । वह मन-ही-मन सोचने लगी—"मैंने डायन को जो दवा पिलाई, उसके अन्दर तो कोई खास गुण था नहीं ।

फिर भी दवा के प्रति उसके मन में जो गहरा विश्वास था और साथ साथ मैंने जो

साहस-कथाएँ उसको सुना दीं, उनसे उत्तेजना पाकर उसने अपनी कायरता पर विजय प्राप्त की ।"

इस बीच नीलांबर की चीख सुनकर अड़ोस-पड़ोस के लोग वहाँ आ पहुँचे । देर तक उपचार करनेके बाद नीलांबर होश में आया । आँख खुलते ही उसने पत्नी से पूछा—"कनकवल्ली, तुम्हारी दवा पीकर डायन में कैसे हिम्मत आ गयी थी, देखो न? उसने हमें जो धन दिया, सो सब खतम हो गया क्या?"

वहाँ पर इकठ्ठा हुए लोगों की समझ में कुछ नहीं आया कि नीलांबर क्या कह रहा है? कनकवल्ली के मुँह से सारा वृत्तान्त सुन कर वे सब विस्मय में आ गये ।

सबेरे तक यह समाचार आग की भाँति गाँव में फैल गया कि कनकवल्ली ने कोई दवा देकर डायन की कायरता को भगा दिया ।

दूसरे दिन सुबह कनकवल्ली अपने आँगन में रंगोली सजा रही थी, कि एक वृद्ध सज्जन अपने पोते को साथ लेकर पहुँच गये । पूछा—"कनकवल्ली, सुना कि तुम्हारे पास कायरता को भगानेवाली कोई दवा है । यह मेरा पोता बड़ा डरपोक और कायर है । इसको दवा देकर मेरी सहायता करोगी?" यह करते हुए वृद्ध ने कनकवल्ली के हाथ में दस रुपये का एक नोट धर दिया ।

कनकवल्ली के मन में यह बात सूझ गई कि कुछ लोगों के मन में घर की हुई कायरता की डायन को भगा सकनेवाली दवा क्या है? कायरों में उत्साह भरने, और उनमें आत्मविश्वास पैदा करने की दवा तो उसके पास है ही ।

यह समाचार जानकर नीलांबर ने कनकवल्ली से कहा—"यही एक अच्छा धंधा बन सकता है । कायरों को उत्साह भरने के प्रयत्न में आज से मैं भी तुम्हारी सहायता करूँगा । अब तुम लोगों को यहाँ छोड़कर मेरे शहर जाने को ज़रूरत ही नहीं ।"

नीलांबर की ये बातें सुनकर कनकवल्ली फूला न समायी ।

प्राप्त धन
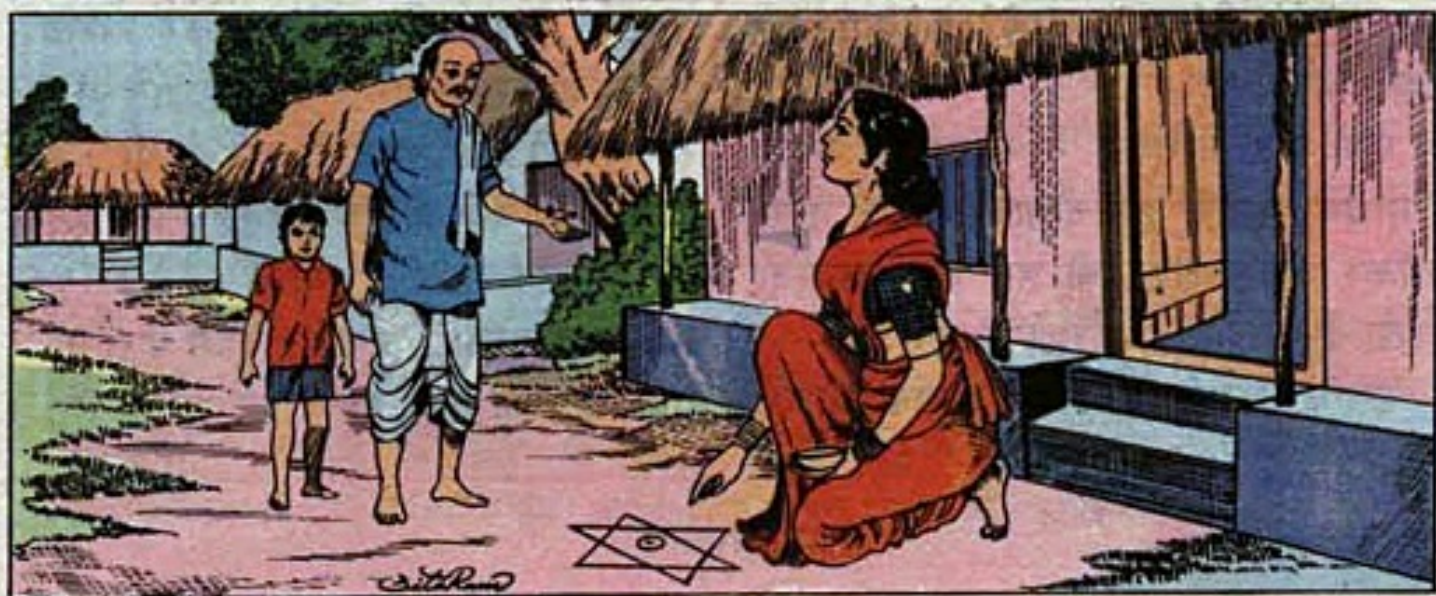
माणिकपुर नामक गाँव में माधव और नारायण अड़ोस-पड़ोस में निवास करते थे। दोनों थोड़े-बहुत शिक्षित थे। पर उन्हें कहीं कोई नौकरी नहीं मिली। इसलिये गाँव के अन्दर जो कुछ काम मिल जाता, उसे पूरा करके अपना पेट पालते थे।

नारायण के मन में अपने ग़रीब होने की बात बहुत खलती थी। लेकिन वह अपना सारा क्रोध अपने बीबी-बच्चों पर उतार कर शान्त हो जाया करता था। मगर माधव अपनी हालत पर संतुष्ट रह कर पत्नी व बच्चों के प्रति अत्यन्त प्रेमपूर्ण व्यवहार किया करता था।

एक बार नारायण ने माधव से कहा, "माधव, हमारी इस दीनावस्था पर तरस खाकर अगर कोई देवी हमें कोई ख़ज़ाना दिखा दें, तो क्या ही अच्छा होगा न?"

इसपर मुस्कुराता हुआ माधव बोला, "सुनो भाई नारायण, मनुष्य का अपनी शक्ती पर जब विश्वास नहीं रहता, तभी वह अनायास प्राप्त होने वाले धन के प्रति इस प्रकार लालायित होता है। तुम उन विचारों में मत पड़ो।"

इसके बाद एक दिन वे दोनों किसी काम से शहर की ओर चल पड़े। रास्ते में नारायण को किसी के हाथों से गिरी हुई एक थैली दिखाई दी। उस ने माधव को दिखाकर उसे हाथ में उठा लिया। उस में एक सौ मुहरें थीं।

एक साथ ऐसी संपत्ति पाकर नारायण प्रसन्न होकर बोला, "माधव, देखते हो न? तुम ने मेरी बात सहज ही काट दी थी। अब देखो, कोई देवी ही हम पर रहम कर इतना धन हमारे लिये छोड़ गयी है।"

माधव बोला, "हम पर रहम करनेवाली यह देवी क्या किसी दूसरे पर नाराज़ हुई है

श्यामा अग्रवाल

क्या? यह धन तो ज़रूर किसी का खोया हुआ है । किसी देवी के द्वारा आसमान से टपकाया हुआ तो नहीं?"

"चाहे जो समझो, हमें धन प्राप्त हो गया है । हम दोनों इसे बराबर बाँट लेंगे ।" नारायण ने अपनी राय सुनायी ।

मगर माधव ने नारायण की बात नहीं मानी । बल्कि सलाह दी, "हम इस थैली को ले जाकर हमारे ग्रामाधिकारी के हाथ सौंप देंगे । वह धन खोनेवाले का पता करके उसे वह लौटा देगा ।"

अब नारायण ग़ुस्से में आकर बोला, "माधव, तुम समझते हो कि मैं नीतिनियमों का पालन नहीं कर रहा हूँ । पर कोई बात नहीं, भाग्यवश मुझे जो धन मिला है, उस से मुझे वंचित करने की कोशिश न करो । तुम अगर अपना हिस्सा लेना नहीं चाहते तो न सही, मुझे उसका दुख ही होगा ।"

माधव ने चुपचाप नारायण के हाथ से पचास मुहरें ले लीं ।

इसके बाद नारायण ने शहर में अपने लिये व पत्नी के लिये भी नये वस्त्र खरीदे । माधव ने अपने हिस्से की राशी वैसे ही सुरक्षित रखी ।

एक महीना बीत गया ।एक बार बात करते करते माधव ने नारायण से कहा, "नारायण, मुझे शहर की कचहरी में सरकारी नौकरी मिल गयी है ।"

विस्मय में आकर नारायण ने पूछा, "शहर में नौकरी? वह तुम ने कैसे हासिल

की?"

"सुनो, मैं बता देता हूँ—उस दिन रास्ते में मिली मुहरों में से तुमने आधी मुझे दे दीं । मैं दूसरे ही दिन उस धन के साथ मेरी पत्नी द्वारा बचायीं गयीं पच्चीस मुहरें लेकर हमारे ग्रामाधिकारी के पास पहुँचा और उसको धन सौंप दिया और सारा वृत्तान्त भी सुनाया ।"

"इसका मतलब है कि, मैं ने पचास मुहरें रख लीं यह बात ग्रामाधिकारी पर प्रकट हो गयी है । है न?" घबराकर नारायण ने पूछा ।

"हाँ, प्रकट तो हो गयी । मगर वह तुमपर बिल्कुल नाराज़ नहीं है । धन खोनेवाला व्यक्ति हमारे ही गाँवका है—मलिक! वह शहर में सब्जी-तरकारी का व्यापार करता

है । उसी समय रामसहाय ने मुस्कुराकर मुझ से पूछा कि, बाकी पच्चीस मुहरों की बात क्या होगी? मैं ने उसे समझाया कि वह बाकी रकम मैं दो तीन महीनों में चुका दूँगा ।" माधव ने सारा मामला कह सुनाया ।

यह सुनकर नारायण विस्मित होकर बोला, "यह बात ठीक है, मगर यह तो बोलो, तुम्हें यह नौकरी कैसे मिल गयी?"

मैं तो वही कहानी सुना रहा था न! कल ही रामसहाय ने मुझे बुलवा लिया और कहा, – "माधव, तुम्हारी सचाई व ईमानदारी प्रशंसनीय है । कल मैं शहर से हो आया हूँ । वहाँ के ख़ज़ाने में सदा एक लाख मुहरें सुरक्षित रखी होती हैं–मूलधन के रूप में । उन को वहाँ किसी विश्वासपात्र आदमी की ज़रूरत थी, सो मैंने तुम्हारी शिफारिश की । उन्हों ने तुम को तत्काल नौकरी में लग जाने की बात बता दी है ।" माधव ने कहा ।

नारायण इस पर चिंतित होकर बोला, "तो इसका मतलब है कि तुम मुझे छोड़ कर चले जा रहे हो! मुझ जैसे लालची को अच्छा ही दण्ड मिला है ।"

मगर उसकी पीठ पर थपकी देकर मुस्कुराते हुए माधव बोला, "नारायण, चिन्ता मत करो । तुम भी मेरे साथ शहर चलोगे । क्यों कि रामसहाय तथा मलिक ने भी मुझ से कहा कि–गरीबी ने ही तुम से यह अनुचित कार्य कराया है । मलिक कहता है कि, शहर में उसके व्यापार में वह तुम्हें भी हिस्सा देना चाहता है । शायद आज ही उसके यहाँ से भी तुम्हें यह ख़बर मिल जाएगी ।"

माधव के कहे अनुसार मलिक ने नारायण को कहला भेजा, "जो कुछ हुआ है, उसे लेकर व्याकुल मत बनो । मेरे व्यापार में हिस्सेदार बनकर मेरा हाथ बँटाओ ।"

नारायण ने भी बड़ी खुशी से अपनी संमति दे दी ।

एक सप्ताह बाद दोनों मित्र अपने अपने परिवारों सहित खुशी से शहर की ओर चल पड़े ।

बिल्ली की मूँछें

बिल्ली जब किसी सुरंग में घुस जाती है, तो पहले सुरंग की चौड़ाई का पता लगाने के लिये अपनी मूँछों का प्रयोग करती है। उसकी मूँछों की चौड़ाई करीबन उसकी देह की चौड़ाई जितनी ही होती है; इसलिये सुरंग की दीवारों को अगर उसकी मूँछें छूती नहीं है, तब वह जान लेती है कि वह उस सुरंग में घुस सकती है ।

अत्यन्त ही खतरनाक

सभी जंगली जानवरों में आफ्रिका की केप नामक भैंस भयानक मानी जाती है । हथौड़े जैसे जरासा नीचे झुके अपने सिर से वह प्रति घण्टे ६० कि. मी. की गति से अपने सींग मार सकती है । १.५ मीटर ऊँचा यह जानवर एक टन वजन का होता है । २.४ मीटर तक व्याप्त मजबूत सींगोंवाले इस भयंकर प्राणी को देखकर सिंह भी इसके रास्ते से हट जाता है ।

अपने शिशु को दीजिए सैरेलॅक का अनूठा लाभ

कीजिए ठोस आहार की आदर्श शुरुआत

४ महीने की उम्र से आपके शिशु को दूध के साथ-साथ ठोस आहार की भी जरूरत होती है. उसे सैरेलॅक का अनूठा लाभ दीजिए.

पौष्टिकता का लाभ : सैरेलॅक का प्रत्येक आहार आपके शिशु की आवश्यकता के अनुसार सारे पौष्टिक तत्व प्रदान करता है — प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फैट, विटामिन तथा मिनरल, सभी पूरी तरह संतुलित.

स्वाद का लाभ : शिशुओं को सैरेलॅक का स्वाद बहुत भाता है.

समय का लाभ : सैरेलॅक पहले से ही पकाया हुआ है और इसमें दूध और चीनी मौजूद है. केवल इसे उबाले हुए गुनगुने पानी में मिला दीजिए.

पसंद का लाभ : तीन तरह के सैरेलॅक में से आप अपनी पसंद का चुन सकती हैं.

कृपया डिब्बे पर दिए गए निर्देशों का सावधानी से पालन कीजिए ताकि इसको बनाने में स्वच्छता रहे और आपके शिशु को संतुलित पोषाहार मिले.

मुफ्त! सैरेलॅक बेबी केयर बुक
लिखिये : सैरेलॅक, पोस्ट बॉक्स नं. 3
नई दिल्ली-110 008

सैरेलॅक का वादा : स्वाद भरा संपूर्ण पोषाहार

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार ५०)

पुरस्कृत परिचयोक्तियां अक्तूबर १९८९ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी ।

Anant Desai

B. Bhansali

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों । ★ अगस्त १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए । ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) ५० रु. का पुरस्कार दिया जाएगा । ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर निम्न पते पर भेजें : चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

जून के फोटो - परिणाम

प्रथम फोटो : खुशी की ललक !

द्वितीय फोटो : दुख की झलक !!

प्रेषिका : डा. इला कौशिक, आई–८, पटेल मार्ग, गाजियाबाद - २०१००१

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु. ३६-००

चन्दा भेजने का पता :

डॉल्टन एजेन्सीज, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास - ६०० ०२६

अन्य देशों के चन्दे सम्बन्धी विवरण के लिए निम्न पते पर लिखिये :

चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्ज, वडपलनी, मद्रास -६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

आओ हैण्डीप्लास्ट खोज निकालें
ये है हैण्डीबॉय़
चोट का मारा,
हैण्डीप्लास्ट स्पॉट, स्ट्रिप,
पैच का चाहे सहारा.
कौन डगर जाए किधर
खोजी बता, देर न कर.
लीक के सहारे
चलो और बनादो
स्पॉट, स्ट्रिप, पैच के
निशान हैण्डीबॉय पर.
निशान के मुताबिक काट लो
दोस्तीभरी पट्टी!
Handyplast®
medicated strips
HTA 1425
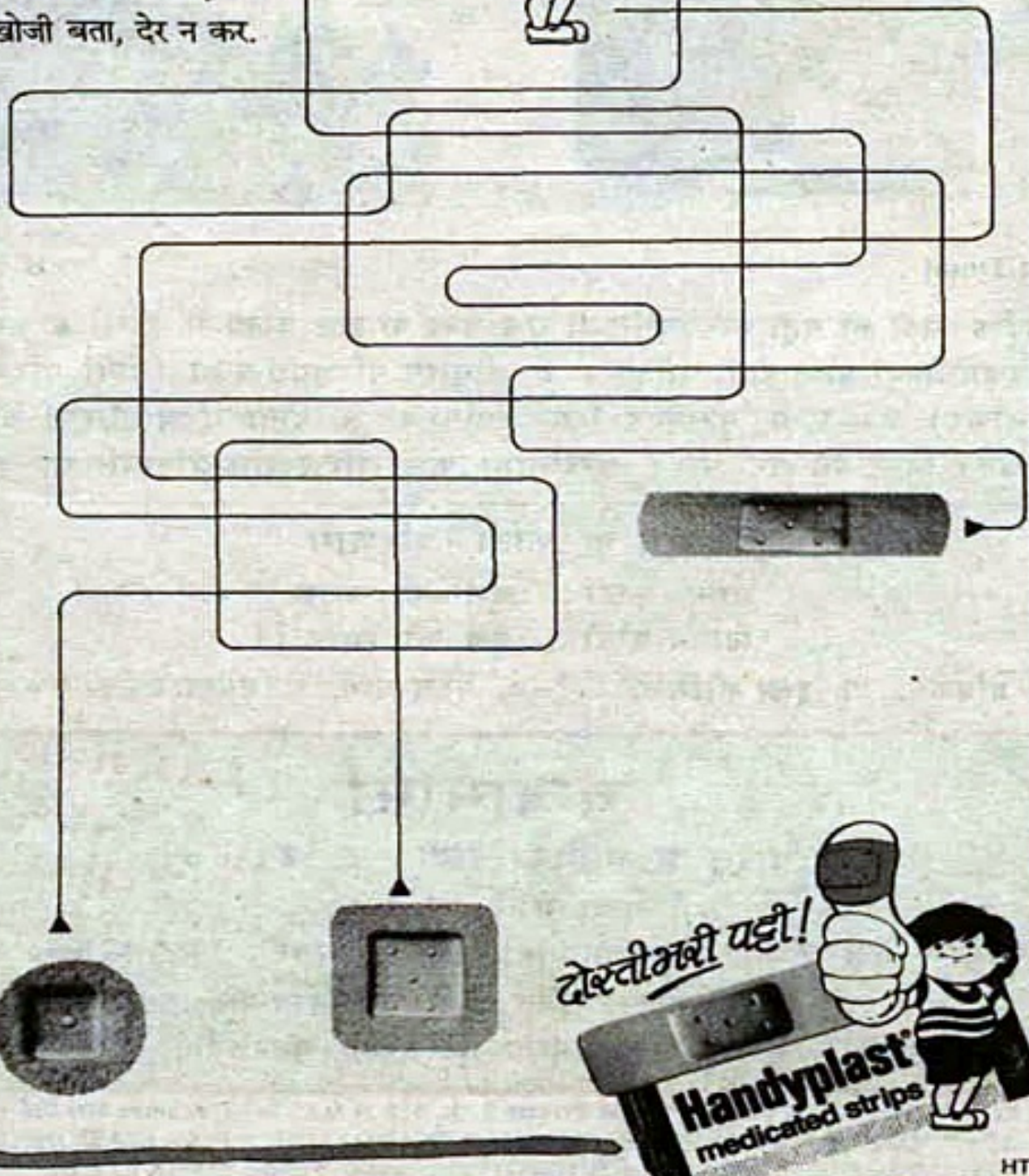
रसदार आमों से बने
फ्रूट बार
पैक यूं
ताज़गी रहे
ज्यूं की त्यूं
nutrine
Naturo
MANGO FRUIT BAR
nutrine
Naturo
MANGO FRUIT BAR
THE FINEST, WIDEST RANGE
nutrine
India's largest selling sweets
अब बारहों महीने
आम का सीजन!
सुविधापूर्ण... स्वादपूर्ण!
Visesh/NC/8830/Hin